चन्दामामा
फरवरी १९९३
रु
4

चन्दामामा

जो प्रकट करती है भारत का महान वैभव – अतीत और वर्तमान का – सुंदर सुंदर कथाओं द्वारा महीने बाद महीने ।

रंगीन चित्रों से सजकर ६४ पृष्ठों में फैली यह पत्रिका प्रस्तुत करती है चुनी हुई कई रोचक-प्रेरक पुराण कथाएँ, लोक कथाएँ, ऐतिहासिक कहानियाँ, महान विभूतियों की जीवन-झलकियाँ, आज की अनेक मोहक कथाएँ और जानने की बातें जो हों सचमुच काम की ।

निकलती है ११ भाषाओं में और संस्कृत में भी ।

चन्दे की जानकारी के लिए लिखें इस पते पर:

डाल्टन एजन्सीज, १८८ एन.एस.के. रोड, मद्रास-६०० ०२६.
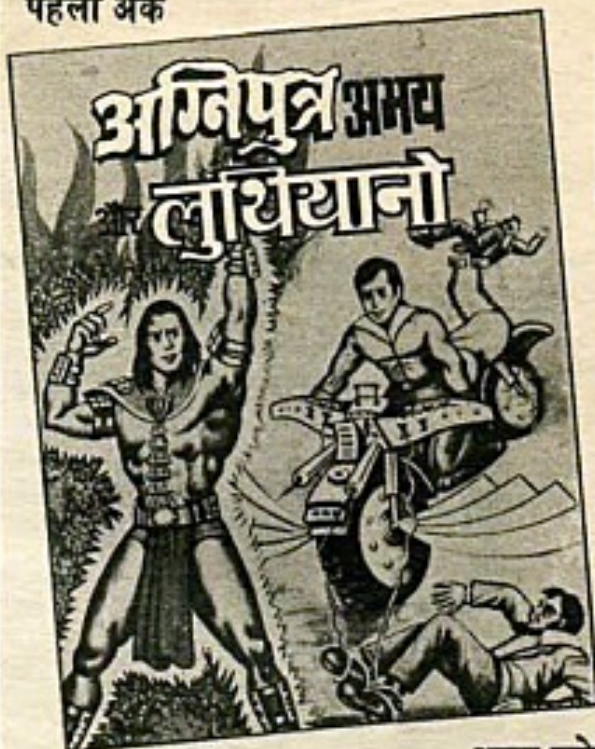
अब, अपने बेटे को दीजिए
संसार की सबसे बढ़िया बंदूक का
बिलकुल असली जैसा मॉडल.

चन्दामामा

फरवरी १९९३

★

अगले पृष्ठों पर

★

एक प्रति : ४ रुपये

वार्षिक चन्दा : ४८ रुपये

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

प्रकृति के नियम

प्रकृति के साथ एकात्म हो जाओ । हमारे बड़े हमें अक्सर यही शिक्षा देते रहे । लेकिन इसका अर्थ क्या है?

हममें से कइयों को किसी-न-किसी समय यह सोचकर अचंभा होता रहा होगा कि आकाश नीला क्यों है? सूरज तपता क्यों है? चांद की किरणों में ठंडक क्यों होती है, जब कि कहा यह जाता है कि चांद अपनी रोशनी सूरज से पाता है? सितारे हमेशा टिमटिमाते क्यों रहते हैं?

फिर और भी कई प्रश्न हैं । जैसे-यह किसका फैसला है कि कौन से फूल का रंग कैसा होगा? घास सब जगह हरी ही क्यों होती है? मोर को नाचना किसने सिखाया? मकड़ी अपने जाले को एक खास तरह से ही क्यों बनाती है?

इन प्रश्नों का कोई अंत नहीं । कुछ लोग कह सकते हैं कि यह सब कुछ ईश्वर या स्रष्टा की ही देन है । कुछ अन्य लोग, जिनकी विज्ञान के प्रति अनुरक्ति है, कहेंगे कि यह सब प्राकृतिक सत्य है जिसे बदला नहीं जा सकता । वैसे अब भी कई लोग प्रकृति के इन रहस्यों का वैज्ञानिक उत्तर पाने की कोशिश कर रहे हैं ।

कहना न होगा कि प्रकृति की सर्वश्रेष्ठ रचना मानव स्वयं ही है । कितने मुकम्मल ढंग से मानव के तमाम अंग काम करते हैं । लेकिन जैसे ही वह प्रकृति के प्रतिकूल जाता है, यह क्रम बिगड़ जाता है और यह मुकम्मलपन भी छिन्न-भिन्न हो जाता है । परिणामस्वरूप उसे कई तरह के रोग और बीमारियां आ घेरती हैं ।

प्रकृति ने सभी जीवधारियों को, जिनमें मानव, पशु और पक्षी शामिल हैं, शांति और आनंद प्रदान किया है । प्रकृति का अपना शासन भी है और इसका संचालन पूरी सूझ-बूझ से तैयार किये गये कानून के द्वारा होता है ।

याद रखो, हमें किसी भी हालत में प्रकृति के कानून का उल्लंघन नहीं करना है ।

वर्ष : ४५ | फरवरी १९९३ | अंक : ६

एक प्रति : रु. ४/- | वार्षिक चन्दा : रु. ४८/-

एकता का झंडा ऊँचा रहे हमारा

चन्दामामा का हम ने ४५ साल पहले प्रकाशन शुरू किया था। यह एक ऐसा घटनापूर्ण समय था, जहां एक ओर विदेशी पालकों की गुलामी की बेड़ियां तोड़ने के लिए करनेवाली आज़ादी की लड़ाई में हमारे देश की जनता को सफलता भी मिली थी, और दूसरी ओर अपने महान देश के भारत और पाकिस्तान में विभाजन के लिए उन्हें मजबूरन सर झुका देना भी पड़ा था।

हम भारतवासियों के लिए वह एक उज्ज्वल भविष्य का समय था। विदेशी पालकों की पीड़ा और साम्प्रदायिक विद्वेषों के बुरे दिनों का अंत हो चुका था और आगे तो एकता, प्रगति और समृद्धि का स्वर्ण युग है—यूं विश्वास किया गया था।

क्या वह संपूर्ण विश्वास आज हमारे लिए दिन का सपना हो गया? देश की शांति और समृद्धि के लिए अब तक जिन धर्मवीरों ने तन-मन-धन के जो जो त्याग दिये थे और जो जो कष्ट झेले थे, क्या वे सब व्यर्थ हो जायेंगे?

नहीं, कदापि नहीं—यद्यपि हाल में कुछ बदकिस्मत हादसे घट चुके हैं और धर्म और राजनीति ने मिलकर हमारे घर में दीवारें खड़ा करने की भरसक कोशिश की थी। हमारे मज़हब चाहे कुछ भी हों, हम सब भगवान की संतान हैं और चाहे हम जिस किसी राजनीति-पक्ष के क्यों न हों, हम सब अखंड भारत के नागरिक हैं। हमें यह सत्य कभी भूलना नहीं चाहिए, वरना विनाश के कगार पर चढ़कर हम स्वयं नष्ट हो जायेंगे और आगे की हमारी पीढ़ियों का भविष्य अंधकार से भर जाएगा।

हिन्दू धर्म शास्त्र यह बताते हैं कि हर प्राणी में भगवान है और हमें हर एक से प्यार करना चाहिए। पैगंबर सलाम मुहम्मद ने कहा कि अल्लाह के नाम पर दूसरों के प्रति प्यार से प्रेरित काम ही जो आप करेंगे अल्लाह को बहुत प्यारे होते हैं। इसा मसीह ने कहा कि अपने पड़ौसी को वैसा ही प्यार दो जो तुम अपने प्रति रखते हो। किसी धर्म ने नहीं कहा कि हम आपस में वैर-द्वेष करें। जब हम किसी से द्वेष करेंगे तब हम किसी भी धर्म के नहीं रह जाते, सिर्फ अधर्मी और अज्ञानी कहलाते हैं।

भिन्नता में एकता के लिए प्रतिरूप है हमारी पत्रिका चन्दामामा। अनेक भाषाओं में प्रकाशित होनेवाली तुम्हारी प्यारी पत्रिका चन्दामामा भारत के समूचे बच्चों को स्वस्थ मनोरंजन और मनोविकास प्रदान कर रही है। लिहाजा सांप्रदायिक झगड़ों से भारत में एकता को जो हानि पहुंच रही है उस पर चन्दामामा को भारी दुख पहुंच रहा है। हम जानते हैं कि भारत के इतिहास में यह एक अस्थाई स्थिति है और यह जल्दी हट जाएगी। तुम से, चन्दामामा के तुम प्यारे पाठकों से, हमारा अनुरोध है कि इस स्थिति को बहुत जल्दी हटाने में अपना योगदान दें ताकि हाल के अशांत-क्षुब्ध वातावरण से गुज़रकर हम शांति-चैन से जी सकें।

जय हिन्द!

बी. विश्वनाथ रेड्डी
चन्दामामा पब्लिकेशन्स

चीन में नीति-परिवर्तन

सोवियत संघ में साम्यवाद के अंत और १९९१ में वहां के विघटन ने दूसरे साम्यवादी देशों में भी परिवर्तन की हवा तेज़ कर दी है। ऐसे देशों में चीन भी शामिल है।

पिछले अक्तूबर में चीन की साम्यवादी पार्टी की १४ वीं राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमें समाजवादी हाट अर्थथवस्था पर आधारित सुधार लाने के लिए देश के संविधान में संशोधन किये गये। चीन को अब तक "बांस के परदे के पीछे" छिपा ऐसा देश कहा जाता था जिसने कभी विदेशी पूंजी, संसाधन या प्रौद्योगिकी को अपने यहां घुसने नहीं दिया। लेकिन अब यह सब बदल जायेगा। कांग्रेस ने निर्णय लिया है कि चीन को चाहिए वह दूसरे देशों के साथ आर्थिक और प्रौद्योगिक आदान-प्रदान और सहयोग को बढ़ावा दे। दूसरे शब्दों में, चीन ने बाहरी दुनिया के सामने खुलकर आना स्वीकार किया है।

कांग्रेस का यह कहना था कि देश घिसे-पिटे विचारों का शिकार था जिसके कारण उसका आर्थिक ढांचा ज्यों-का-त्यों बना हुआ था। पार्टी के महासचिव द्वारा पेश की गयी २६,००० शब्दों की रिपोर्ट में इस बात की ओर इशारा था कि जहां कहीं हाट की शक्तियों को खुलकर सामने आने का मौका मिला है, वहां अर्थव्यस्था मज़बूत हुई है और बराबर विकास पाती रही है। रिपोर्ट के अनुसार "सुधार भी एक प्रकार की क्रांति है—एक ऐसी क्रांति जिसका लक्ष्य उत्पादक शक्तियों को मुक्त कराना है।"

कांग्रेस के इस निर्णय को "चीन की दूसरी क्रांति" कहकर उसका स्वागत किया गया। पहली क्रांति तब हुई थी जब माओ-त्से-तुंग के नेतृत्व में १९४९ में साम्यावादी पार्टी सत्ता में आयी। माओ-त्से-तुंग का दायां हाथ उस समय देंग श्यो पिंग था जो माओ के गुज़रने के दो साल पहले, यानी १९७८ में, प्रकाश में आ गया था। पार्टी में उसकी खूब चलती थी। चीन में उस समय आधुनिकीकरण और अर्थ-व्यवस्था के नव-निर्माण की देख-रेख वही कर रहा था। तेरहवीं राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्षता करने के बाद वह १९८७ में पोलित ब्यूरो (केंद्रीय समिति) से सेवानिवृत्त हो गया। अब पार्टी में शासकीय तौर पर उसे कोई स्थान प्राप्त नहीं है।

लेकिन वह एक "शांत क्रांति" का

जन्मदाता है । हालांकि उसकी उम्र इस समय ८८ वर्ष है, उसने एक वर्ष पहले हाट अर्थ व्यवस्था की दिशा में और तेज़ एवं साहसपूर्ण कदम उठाने के लिए अभियान शुरू कर दिया था । इसे "देंग-सिद्धांत" कहा जाता है । इसका ध्येय चीन के आधुनिक इतिहास में सबसे अधिक स्थायित्व और संपन्नता वाले युग का श्रीगणेश करना है । हाल की राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस सिद्धांत को सरकारी तौर से मान्यता दे दी है ।

चीन का यह भव्य आधुनिक "इतिहास-पुरुष" कांग्रेस में उपस्थित नहीं था, लेकिन आखिरी दिन यह "बड़ा बुजुर्ग" पोलितब्युरो के सदस्यों से मिलने केलिए ज़रूर आया । इन सदस्यों में से आधे सदस्य लगभग ५० वर्ष की उम्र के हैं । देंग की आशा है कि यह "जवान खून" उसकी नीतियों को उसके बाद भी ज़िंदा रखेगा ।

चीन के इतिहास में शांग वंश का शासन ईसा पूर्व १८ वीं से १२ वीं शताब्दी तक चलता बताया जाता है । ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में यह शासन साम्राज्य बन गया । उस समय हान वंश सत्ता में था जिसने चीन की "विशाल दीवार" बनवायी । इस दीवार की लंबाई २,२५० किलोमीटर और ऊंचाई ८ मीटर है जो कि किले का काम भी करती है । तीसरी शताब्दी के बाद क्विन वंश सत्ता में आया । इसके बाद तांग वंश (७ वीं से १० वी शताब्दी); सोंग वंश (१० वीं से १३ वीं शताब्दी) और क्विंग वंश (१९१२ तक) ने शासन किया । सुन-यात्-सेन ने क्विंग वंश के शासकों को सत्ता से बाहर किया और गणतंत्र की स्थापना की । इसके बाद जनरल च्यांग-काई शेक अपनी क्यू-मिन तांग (राष्ट्रीय पार्टी) के साथ सत्ता में आया । दूसरे विश्व युद्ध के दौरान (१९३९-१९४५) जापान ने चीन के कुछ हिस्से पर कब्ज़ा कर लिया, लेकिन युद्ध में जापान की पराजय के बद साम्यवादियों ने समूचे देश को अपने नियंत्रण में लिया और अक्तूबर, १९४९ को चीन के लोक गणतंत्र की स्थापना हुई ।

कर्ज़ की वसूली

सूर्यदेव सीतापुर में नया-नया आया था । उसने वहां ज़रूरतमंदों को मोटे ब्याज पर कर्ज़ देना शुरू किया । हां, कर्ज़ तो वह देता गया, लेकिन उसे वसूल कर पाना उसके बूते का न रहा ।

सूर्यदेव के एक पड़ोसी ने उसे सलाह देते हुए कहा, "मैं तुम्हारी तकलीफ समझ रहा हूं । इस मामले में तुम्हारी मदद केवल चंदनपुरी का सुमेध ही कर सकता है ।"

सूर्यदेव फौरन चंदनपुरी पहुंचा । सुमेध केवल बीस वर्ष का एक युवक था । खैर, सुमेध को सूर्यदेव ने अपनी तकलीफ बतायी और उससे मदद मांगी । इस पर सुमेध काफी देर तक सोचता रहा । फिर वह सूर्यदेव से बोला कि वह एक सप्ताह में सीतापुर आयेगा ।

अपने वचन के अनुसार सुमेध एक सप्ताह के भीतर सीतापुर आ पहुंचा । सूर्यदेव ने उसके रहने की व्यवस्था अपने घर पर ही की । फिर उसने उसे उन सब व्यक्तियों के नाम और पते बताये जो उसे कर्ज़ की रकम लौटाने में आनाकानी कर रहे थे ।

सुमेध ने सूर्यदेव से यह भी जान लिया था कि जिन लोगों ने उससे कर्ज़ लिया था, वे सब अच्छी हालत में हैं और कर्ज़ लौटा सकते हैं, और यह भी कि वे कर्ज़ इसलिए नहीं लौटा रहे कि वे सूर्यदेव की रकम हज़्म कर जाना चाहते हैं, और सूर्यदेव क्योंकि बाहर का आदमी है, इसलिए उसकी मदद करने वाला वहां कोई नहीं है ।

दो दिन बीते भी न थे कि सुमेध सूर्यदेव को लेकर सुंदरेश्वर के घर गया । सुमेध ने सूर्यदेव को समझाया कि उसे सुंदरेश्वर के घर पहुंच कर क्या करना होगा । स्वयं वहां से लौट गया ।

सूर्यदेव ने सुंदरेश्वर को उसके घर से बाहर

शारदा कुलकर्णी

बुलवाया और उसे कर्ज़ की रकम लौटाने के लिए कहा। इस पर सुंदरेश्वर बोला, "हां, हां, मैं तुम्हारी रकम लौटा दूंगा। मेरे हाथ कुछ पैसा तो लगे। विश्वास रखो मेरे पास तुम्हारी यह रकम अमानत है।"

लेकिन सूर्यदेव ने उसे छोड़ा नहीं, बल्कि उससे बोला कि वह जब तक अपनी रकम वसूल नहीं कर लेगा, तब तक वहां से जायेगा नहीं। इस पर दोनों में कहा-सुनी हो गयी और वहां काफी लोग जमा हो गये। इसलिए उसने सूर्यदेव को अपने घर के भीतर बुलाया और कहा, "मेरे पास जैसे ही पैसा आयेगा, मैं तुम्हारा कर्ज़ ब्याज के साथ चुकता कर दूंगा।"

"यही बात तुम गांव के कुछ प्रमुख लोगों के सामने कह दो। तब इस बार मैं तुम्हें छोड़ दूंगा।" सूर्यदेव ने कहा।

लाचार होकर सुंदरेश्वर ने गांव के कुछ बड़े लोगों के सामने यह वचन दिया कि वह जल्दी सूर्यदेव की रकम लौटा देगा।

इतने में वहां एक व्यक्ति आया। आते ही उसने सुंदरेश्वर से कहा, "क्षमा कीजिए, शहर में दंगे-फसाद हो रहे हैं। इसलिए वक्त पर मुझे पैसा नहीं मिला। मुझे आप तक पैसा पहुंचाना था। मेरे पास सूर्यदेव का आदमी आया था। उसने मुझे सूचना दी थी कि आपको उसे उसकी रकम लौटानी है, और इसलिए आप पैसे का बेसब्री से इंतज़ार कर रहे हैं। मैं आपकी परेशानी समझ रहा था। इसलिए मैं वह रकम ले आया। आप सूर्यदेव की रकम अब आसानी से लौटा सकते हैं।"

उस व्यक्ति की बात सुनकर सुंदरेश्वर का चेहरा उतर गया। लाचार होकर उसे सूर्यदेव की रकम लौटानी पड़ी।

दरअसल, सुमेध ने यह पता लगा लिया था कि सुंदरेश्वर ने किसी व्यक्ति के हाथों शहर में धान के बोरे बेचने के लिए भेजे हैं। उस व्यक्ति का पता लगाकर उसने उससे झूठ कहा कि सुंदरेश्वर ने उसे उसके पास भेजा है। इसलिए सुमेध के कहने पर ही वह सुंदरेश्वर के पास पहुंचा था। इस तरह सुमेध की पहली योजना सफल रही।

सूर्यदेव से कर्ज़ लेकर उसे वापस न करने वाला दूसरा व्यक्ति था चंद्रस्वामी। सुमेध

उसके पीछे लगा रहा और उसके बारे में उसने सारी जानकारी जुटा ली । पर इससे कोई विशेष लाभ न हुआ ।

एक दिन चंद्रस्वामी गांव में बनी एक बड़ी सी हवेली में रहने वाले रामराज से मिलने गया । सुमेध तो उसके पीछे लगा ही था । कुछ कोशिश करके उसने असलियत का पता भी लगा ही लिया था ।

रामराज का शहर में काफी नाम था । चंद्रस्वामी का बेटा अपनी पढ़ाई पूरी कर चुका था । चंद्रस्वामी चाह रहा था कि रामराज उसे शहर में नौकरी दिलवाने में मदद करे । रामराज की शोहरत के कारण चंद्रस्वामी के बेटे को नौकरी मिलने की संभावना दिखाई देने लगी थी ।

सुमेध सोच में पड़ गया । अखिर, उसके हाथ एक उपाय लगा । उसने सूर्यदेव को समझाया कि वह रामराज के घर जाये और वहां उसे चंद्रस्वामी द्वारा उससे लिये गये कर्ज़ के बारे में बताये ।

सूर्यदेव ने वैसा ही किया । रामराज के घर पहुंचकर वह बोला, "काफी समय से चंद्रस्वामी मेरा कर्ज़ चुकता नहीं कर रहा । वादा तो करता रहता है, लेकिन उसे कभी पूरा नहीं करता । कृपया आप उससे कहकर मेरी रकम दिलवा दीजिए । मैं आजीवन आपका आभारी रहूंगा ।"

रामराज ने सूर्यदेव के सामने ही चंद्रस्वामी को बुलवाया और उससे बोला, "सुनो श्रीमान्, जब किसी से कर्ज़ लेते हैं तो उसे लौटाना भी होता है । क्या तुम कल मेरे साथ भी ऐसा ही करोगे?"
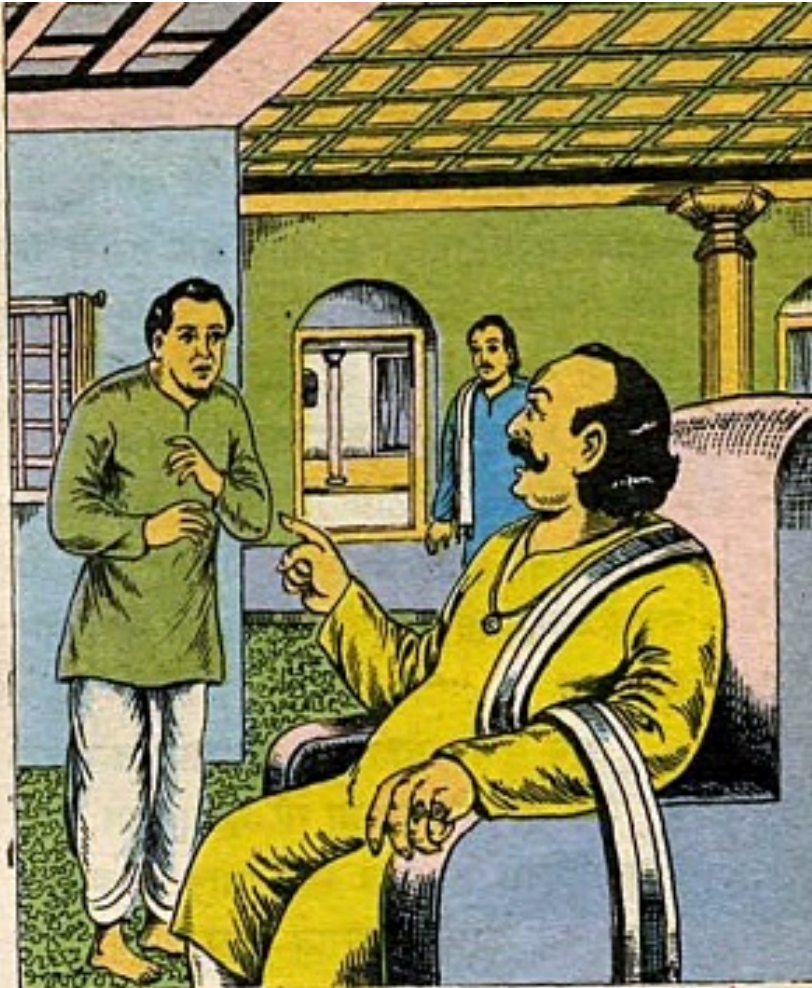
रामराज की बात सुनकर चंद्रस्वामी सकपका गया । वह तुरंत अपने घर गया और वहां से उसने पैसा लाकर सूर्यदेव के हवाले कर दिया ।

सुमेध की यह दूसरी सफलता थी । सूर्यदेव ने उसकी बुद्धि की प्रशंसा की और बोला, "तुम्हारी इस सहायता को मैं कभी भूल नहीं सकूंगा । लेकिन मैं चाहता हूं कि मेरा काम-काज भविष्य में भी ठीक चलता रहे । इसलिए मुझे कोई उपाय बताओ ।"

सूर्यदेव की बात सुनकर सुमेध बोला, "मेरे उपाय बताने से क्या लाभ होगा? यदि. आपका कारोबार ईमानदारी पर टिका हुआ

है और उससे दूसरों को सुख मिलता है, तो उसके लिए किसी प्रकार के उपाय की आवश्यकता नहीं । हां, यदि आप दूसरों की कमज़ोरी से फायदा उठाकर अधिक से अधिक ब्याज ऐंठने की कोशिश करेंगे तो आपको हानि भी उठानी पड़ सकती है ।"

"और सब तो ठीक है, लेकिन अभी तक एक वसूली बाकी है । वह भी हो जाये तो बहुत अच्छा हो," सूर्यदेव ने गहरी सांस लेते हुए कहा ।

"आप उस शंकरदास की बात कर रहे हैं? मैंने आपको बताया तो था । उसे आप छोड़ दीजिए । अपने छोटे भाई से झगड़ा करके वह काफी नुक्सान उठा चुका है," सुमेध ने उसे समझाते हुए कहा ।

"तो मैं इस सारी की सारी रकम को ऐसे ही जाने दूं?" सूर्यदेव के चेहरे पर दुःख का भाव था ।

"मैंने, मुझसे जहां तक बन पड़ा, आपकी मदद की । उसके एवज़ में भी तो आप मुझे कुछ देंगे ही न । मैं आपसे कुछ भी नहीं लूंगा । समझ लीजिए शंकरदास से आपके कर्ज़ की वसूली हो गयी ।" सुमेध ने कहा ।

सुमेध बिलकुल निर्विकार दिख रहा था । उसके चेहरे पर किसी प्रकार की कोई परेशानी न थी । सूर्यदेव उसे देखकर चकित रह गया । उसमें ज्ञान का उदय हुआ । वह उसी क्षण एक निर्णय पर पहुंचा, और सुमेध से बोला, "तुम बुद्धिमान ही नहीं, उदार और नेक इंसान भी हो । मेरी ओर से तुम्हें जो रकम मिलनी है, उसे मैं शंकरदास के खाते में जमा तो कर दूंगा, लेकिन मैं तुम्हें कुछ पुरस्कार ज़रूर देना चाहूंगा । हां, इसके बारे में मैं तुम्हें अपनी बेटी से बात करके ही बता सकूंगा ।" और यह कहकर सूर्यदेव अपने घर के भीतर चला गया ।

सूर्यदेव की बेटी सुवर्चला. सुमेध और अपने पिता के बीच होने वाली बातचीत सुन रही थी । उसका पिता जैसे ही घर के भीतर दाखिल होने को हुआ, वैसे ही वह लज्जा से सकुचाती हुई पिछवाड़े की ओर भागी ।
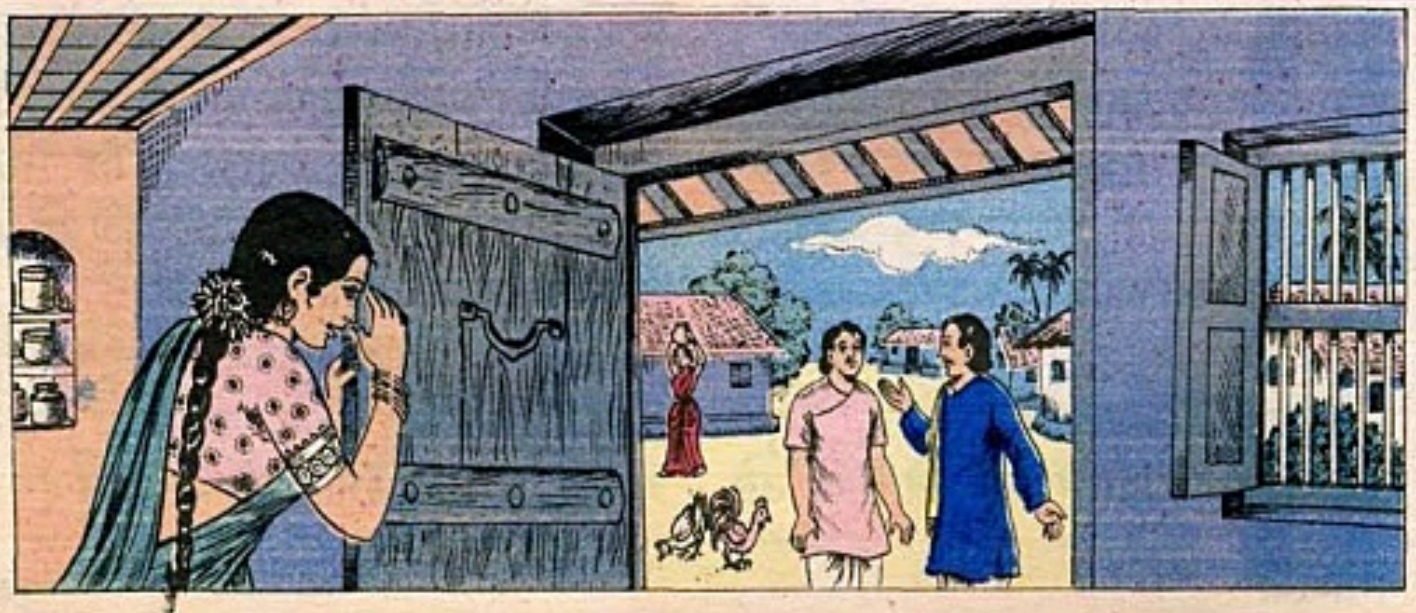
व्याघ्रेश्वर का गर्व

दंडकारण्य के निकट एक छोटा-सा राज्य था जिसका नाम बाघपुर था। वहां पर राजा व्याघ्रेश्वर भूपति का शासन था। अपने नाम के अनुरूप व्याघ्रेश्वर काफी प्रचंड प्रकृति का था।

बाघपुर राज्य पर व्याघ्रेश्वर भूपति का कब्ज़ा उन दिनों हुआ था जब वहां की स्थिति कुछ डांवाडोल थी। उसने उसी का लाभ उठाया और राज्य का नाम भी बदलकर बाघपुर कर दिया। राजा का नाम वैसे तो व्याघ्रेश्वर था, लेकिन एक ब्राह्मण ने उसकी प्रशंसा में उसे साक्षात भगवान् कहा ही था। व्याघ्रेश्वर गर्व से ऐंठ गया।

उन्हीं दिनों बाघपुर में एक योगी आया। लोग उसे योगीराज कहते थे और बड़े भक्तिभाव से उसके प्रवचन सुनते थे।

राजा के गुप्तचरों ने यह बात राजा तक पहुंचा दी, और कहा कि भगवान् के बारे में राजा के जो विचार हैं, यह योगीराज लोगों को उनसे भिन्न बता रहा है।

यह सुनते ही व्याघ्रेश्वर ने अपने सैनिकों को बुलवाया और उन्हें आदेश दिया कि वे तुरंत योगी को उसके दरबार में पेश करें।"

सैनिकों योगीराज को लाकर राजा के सामने पेश कर दिया।

योगीराज को देखते ही राजा ने अपनी आंखें तरेरीं और उससे कहा, "जानते हो मैं भूपति हूं? भूपति सम्राट् होता है। हमारे दरबरी पंडित चूड़ामणि ने बहुत पहले ही हमें बता दिया था कि जो भूमि का पालन करता है, वही साक्षात भगवान् होता है। हमने सुना है कि तुम किसी दूसरे भगवान् का हमारी प्रजा में प्रचार कर रहे हो जो हमारा सरासर अपमान है। हम तुम्हें अभी मृत्युदंड

शिवकुमार शर्मा

देकर तुम्हारा यह प्रचार समाप्त किये देते हैं।"

राजा की बात पर योगीराज को हंसी आ गयी। बोला, "राजन्, मैंने सुना है आपके पास इस सर्वज्ञ चूड़ामणि के अलावा दो मंत्री भी हैं जो बड़े विवेकवान हैं। मैं उनसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूं। उनका उत्तर सुनने के बाद आप मुझे मृत्युदंड दे सकते हैं।"

व्याघ्रेश्वर भूपति इस सुझाव को मान गया। तब योगीराज ने तीन ताड़पत्र मंगवाये और उन पर एक ही प्रश्न लिखा — "मिट्टी का अर्थ क्या है?"

एक मंत्री ने लिखा था— "मिटटी से ही धरती का निर्माण हुआ है।" दूसरे मंत्री का उत्तर इस प्रकार था— "मिट्टी जल से भिन्न पदार्थ है।" और उस सर्वज्ञ ब्राह्मण ने उत्तर इन शब्दों में व्यक्त किया — "मिट्टी वह पदार्थ है जो समस्त प्राणियों, चल-अचल, को भी आश्रय देता है।"

योगीराज ने वे ताड़पत्र राजा व्याघ्रेश्वर भूपति को भी दिखाये और कहा, "राजन् अब आप स्वयं ही देख लीजिए। विवेकवान और प्रकांड विद्वान भी एक साधारण से पदार्थ, मिट्टी, के बारे में भिन्न विचार रखते हैं। भगवान् तो आखिर भगवान् है। तब उसके बारे में एक-जैसे विचार प्रकट करना क्या संभव है?"

व्याघ्रेश्वर भूपति कुछ क्षणों तक मौन रहा। फिर वह अपने सिंहासन से नीचे उतरा और योगीराज के पांवों पर गिर कर बोला, "महात्मन्, आपने एक साधारण से प्रश्न से मेरी आंखें खोल दीं। सत्य अब मेरी समझ में आ गया है। मुझे अपना शिष्य स्वीकार कीजिए और आशीर्वाद दीजिए।"

योगीराज को राजा पर स्नेह आ गया। उसने उसे उठाकर अपने गले से लगा लिया।

व्याघ्रेश्वर का सारा गर्व अब काफूर हो चुका था और वह सचमुच एक महान राजा बन गया था।
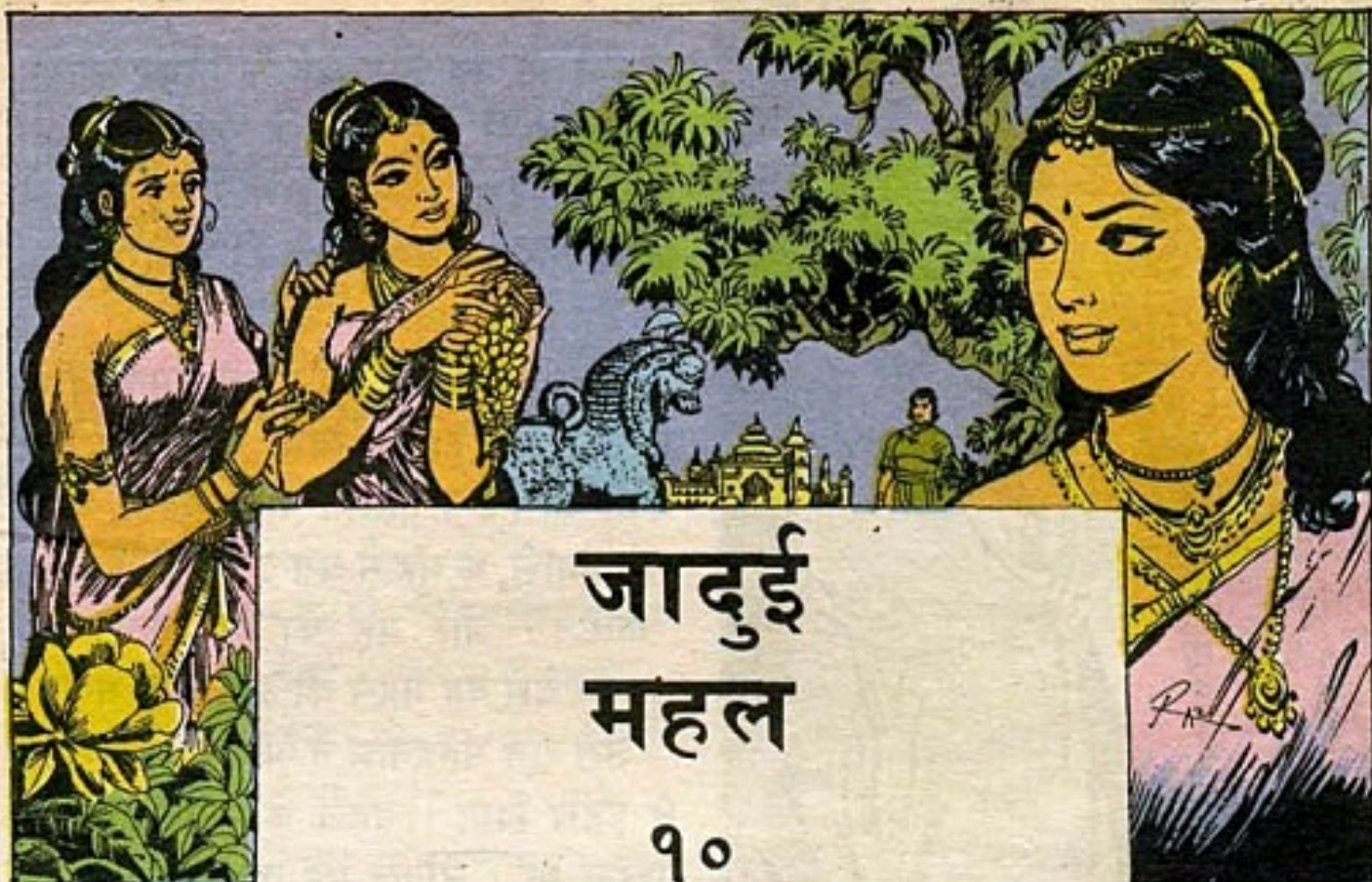
जादुई महल

१०

[राजकुमारी विद्यावती का अपहरण हो गया है। उधर राज ज्योतिषी आचार्य बाचस्पति को अचंभा हो रहा है कि तब से उसके पास, एक दूसरा ज्योतिषी, जगतपति क्यों नहीं आया। वह अपना संदेह राजा से कहता है। इधर एक युवक महेंद्रनाथ राजा से आज्ञा लेकर अपनी इच्छा से राजकुमारी की खोज में निकल पड़ता है और उस जादुई महल को ढूंढ़ निकालता है जहां राजकुमारी एक प्रकार से नज़रबंद है। महेंद्रनाथ को जादुई महल में दरबान का काम मिल जाता है जिससे वह महल में होने वाली हलचल पर आंख रखे रहता है।—अब आगे पढ़ो]

अगले दिन महेंद्रनाथ समय से पहले ही अपने पहरे वाले द्वार के निकट जा पहुंचा और फिर बड़ी सावधानी से इधर-उधर देखने लगा। इतने में उसे महल से बाहर आती तीन युवतियां दिखाई दीं। उनके साथ अब वह बुढ़िया नहीं थी। वे तीनों युवतियां एक ही तरह की वेशभूषा में थीं। इसलिए महेंद्रनाथ के लिए उस युवती को पहचानना मुश्किल हो गया जिसे उसने पिछले दिन देखा था।

कुछ देर बाद उन तीन युवतियों में से एक तो लौट गयी और बाकी दो में से एक उद्यान में टहलने लगी। जो युवती टहल नहीं रही थी, वह चुपचाप एक जगह पर बैठ गयी थी और टहलने वाली युवती पर कड़ी नज़र रखे थी।

महेंद्रनाथ एक पेड़ के पीछे छिप गया और जैसे ही वह युवती टहलती हुई उधर

जैसे ही वह फिर पेड़ के निकट आयी, महेंद्रनाथ ने उस पेड़ के पीछे से थोड़ा झांककर देखा। उसी क्षण राजकुमारी ने अपने होंठों पर उंगली रखकर इशारा किया कि वह कोई आवाज़ न करे।

इतने में वह बैठी हुई युवती अपनी जगह से उठी और टहलने वाली युवती की ओर बढ़ने को हुई। टहलने वाली युवती, यानी राजकुमारी, के मुंह से बस इतना ही निकला, "कल।" और यह कहकर बिना पीछे मुड़कर देखे वह महल की ओर चली गयी।

उस रात महेंद्रनाथ ने और भी सावधानी से पहरा दिया। महल के ऊपरी कक्ष में प्रकाश था। लेकिन यह कक्ष वह नहीं था जिसमें पिछली रात प्रकाश दिखाई दिया था। महेंद्रनाथ समझ गया कि इस विशिष्ट अतिथि को एक ही कक्ष में नहीं रखा जाता, बल्कि हर रोज़ उसके लिए अलग-अलग कक्षों में ठहरने की व्यवस्था की जाती है।

आयी, वैसे ही उसने बड़ी धीमी आवाज में पुकारा, "युवरानी! क्या आप युवरानी विद्यावती हैं?"

इस तरह का संबोधन सुनकर विद्यावती ने झट से उस दिशा में देखा जहां से वह आवाज़ आयी थी। लेकिन उसे यह पता न था कि वह आवाज़ कहां से आ रही है। इसलिए वह बिना रुके आगे बढ़ गयी।

टहलते-टहलते वह जब फिर उस पेड़ के निकट आयी तो महेंद्रनाथ ने फिर पहले की तरह पुकारा। तब राजकुमारी थोड़ा-सा रुकी, लेकिन इस डर से कि उसकी निगरानी करने वाली युवती को संदेह न हो जाये, वह आगे बढ़ गयी। फिर वह थोड़ी ही देर बाद वापस भी आ गयी।

महेंद्रनाथ को अब विश्वास हो गया था कि वह युवती और कोई नहीं, युवरानी ही है, और उसे इसलिए अन्य युवतियों की वेशभूषा में रखा जाता है ताकि कोई उसे आसानी से पहचान न सके।

थोड़ी देर बाद ही उसका वह दरबान-मित्र वहां चला आया। महेंद्रनाथ उससे बोला, "क्या बात है, आज तुम बिलकुल दिखाई ही नहीं दिये?"

दरबान-मित्र बहुत जल्दी में था। बस इतना ही कह पाया, " आज हमारे यहां और

कई पंडित आये हुए हैं। उन्हें मालिक तक पहुंचाने की ज़िम्मेदारी मेरी ही थी न। इसलिए मैं बहुत व्यस्त रहा। अच्छा, तुम पूरी सावधानी से चौकसी करना।" और यह कहकर वह वहां से चला गया।

सुबह हुई तो महेंद्रनाथ ने दो परिचारिकाओं को रसोईघर से कुछ खाद्य पदार्थ ले जाते देखा। लेकिन उनके साथ वह बुढ़िया नहीं थी।

शाम हुई तो वह युवती, यानी राजकुमारी, समय से थोड़ा पहले ही टहलने चली आयी। आज उसके साथ केवल एक ही परिचारिका थी। दोनों कुछ ही देर तक उद्यान में टहलीं। इसके बाद परिचारिका तो एक जगह बैठ गयी, लेकिन राजकुमारी घने पेड़ों की ओर आगे बढ़ आयी। महेंद्रनाथ पिछले दिन वाले पेड़ के पीछे ही खड़ा था। उसने उस प्रकार फिर धीमे स्वर में कहा, "युवरानी, मैं महेंद्रनाथ हूं। वीरगिरि से आया हूं।"

राजकुमारी ने यह सब तो सुन लिया, लेकिन वह वहां रुकी नहीं, आगे बढ़ गयी। थोड़ी देर बाद वह लौटकर फिर वहां आयी और उतनी ही धीमी आवाज़ में बोली, "मैं युवरानी विद्यावती ही हूं। हमें यहां से बाहर निकलना होगा।"

"युवरानी, आपको यहां अपहरण करके लाने वाले कौन हैं?" महेंद्रनाथ ने प्रश्न किया।

"मैं नहीं जानती। यह उस बुढ़िया को ही पता होगा।" राजकुमारी विद्यावती

ने कहा।

"वह बुढ़िया कौन है? काहं रहती है?" महेंद्रनाथ ने फिर प्रश्न किया।

"वह अपने को कमला कहती है। हमारे राजमहल की वृद्ध परिचारिका कमला की तरह ही दिखाई देती है। लेकिन कल से वह कहीं दिखाई नहीं दे रही।"

"आप के साथ वे दूसरी परिचारिकाएं कौन हैं?" महेंद्रनाथ अपने को आश्वस्त करना चाह रहा था।

"वे अनेक हैं। वे सब एक जैसी दिखाई देती हैं। उनके तो मुझे नाम तक भी याद नहीं रहे।" विद्यावती ने उत्तर दिया।

"क्या वे आपसे कुछ बोलती हैं?" महेंद्रनाथ ने फिर प्रश्न किया।

"केवल ज़रूरत पड़ने पर। लेकिन एक-दो शब्द ही। लगता है यहां कोई बहुत बड़ा षड़यंत्र चल रहा है। यहां से जल्दी से जल्दी निकल चलना चाहिए।" और यह कहकर राजकुमारी दूर बैठी परिचारिका की ओर बढ़ गयी।

इतने में वहां एक और परिचारिका चली आयी थी। इसलिए वे तीनों एक साथ वहां से लौट गयीं।

एक बार युवरानी को देखकर उससे बात कर लेने के बद महेंद्रनाथ का उत्साह बढ़ गया था। उसे खुशी थी कि युवरानी सकुशल है। लेकिन उसे यह सोचकर ताज्जुब हो रहा था कि यहां उसे कौन लाया होगा। क्या उसे यहां लाने वाला इस महल का मालिक ही है? यदि इसमें उसका हाथ नहीं है तो किसका हाथ रहा होगा? फिर उसे इस बात की चिंता हुई कि वह युवरानी को वापस वीरगिरि के राजमहल में कैसे पहुंचायेगा। कुछ इसी तरह के विचार उसके मन में बड़ी तेज़ी से आ-जा रहे थे।

"लगता है काफी थक गये हो?" यह स्वर उसके दरबान-मित्र का था। उसे सुनकर महेंद्रनाथ चौंका। फिर संभलकर बोला, "नहीं मेरे भाई, तुम्हारे कहने पर मैं थोड़ा जल्दी यहां चला आया था। अभी कुछ देर पहले ही यहां कुछ युवतियां टहल रही थीं।"

"युवतियां? क्या तुमने उन्हें देखा?" दरबान-साथी ने प्रश्न किया।

"नहीं।" महेंद्रनाथ ने नकारात्मक ढंग से अपना सर हिला दिया।

"अगर तुमने उन्हें देखा भी है तो अब नहीं देख पाओगे। जो पंडित आये थे, वे भी लौटने को हैं। मालिक ने एक पालकी मंगवाने का आदेश दिया है। वह स्वयं तो कभी पालकी में बैठते नहीं। शायद इस पालकी में वह विशेष अतिथि ही जायेगी, ऐसा मेरा अनुमान है। वह किसी देश की युवरानी दिखती है। जैसे ही वह यहां से जायेगी, वैसे ही अन्य स्त्रियां भी यहां से चली जायेंगी।" दरबान-साथी ने हंसते हुए कहा।

"अच्छा।" महेंद्रनाथ अपने चेहरे पर बिना कोई भाव लाये बोल पड़ा।

"हां, मित्र, आज रात तुम्हें और भी सावधानी से पहरा देना होगा। बस आज रात की ही बात है।" दरबान-साथी इतना कहकर वहां से चला गया।

महेंद्रनाथ के मन में फिर हलचल शुरू हो गयी। अपने दरबान-साथी से उसे जो खबर मिली थी, उसे वह युवरानी तक पहुंचाना चाहता था। पर पहुंचाये कैसे? इसी को लेकर वह काफी देर तक परेशान रहा।

आधी रात बीत चली थी। महल में बत्तियां बुझ गयी थीं। महेंद्रनाथ बड़े हलके कदमों से महल की ओर बढ़ा। मुख्य द्वार बंद था। उसे उसने धक्का देकर देखा। भीतर से चिटकनी चढ़ी हुई थी। उसने अगल-बगल देखा। मुख्य द्वार के अलावा वहां और कोई द्वार नहीं था। केवल यही द्वारा था, इसलिए उसने अब उस द्वार को अपने बायें हाथ से ठेला। द्वार एकदम खुल गया।

वह महल में दाखिल हुआ। आगे तंग रास्ता था। उस रास्ते के दोनों ओर कमरे ही कमरे थे, जो बंद थे। कहीं किसी प्रकार की कोई आहट सुन नहीं पड़ रही थी।

महेंद्रनाथ उस तंग रास्ते को पार करके सीढ़ियों के निकट आया, और सीढ़ियों पर चढ़कर ऊपर वाली मंज़िल पर जा पहुंचा। वहां भी उसे एक तंग बरामदा, और बरामदे के दोनों तरफ बंद कमरे दिखाई दिये। लेकिन वह अपने बायें हाथ से जिस किसी कमरे के भी दरवाजे को छूता, वह फौरन

खुल जाता।

इसी तरह वह एक कमरे के दरवाज़े को खोलकर उसमें दाखिल हुआ। लेकिन पल भर के लिए तो वह चौंक उठा। उसे लगा जैसे कोई उसके सामने खड़ा है। पर वह जल्दी ही संभल गया, क्योंकि वह पहचान गया था कि वह तो उसी का अक्स है जो सामने लगे आइने में दिख रहा है। उस कमरे में आइने ही आइने थे जो आदमकद थे। उस धुंधलके में वह जिधर भी मुड़ता, उसे अपना रूप ही दिखाई देता।

वह वहां से बाहर चला आया। फिर उसने अपने बायें हाथ से एक और कमरे के दरवाज़े को छूकर देखा। वह भी एकदम से खुल गया। वह उसके भीतर चला गया। कमरा

खाली था ।

उस कमरे से महेंद्रनाथ एक तीसरे कमरे में गया । वहां कुछ स्त्रियां पलंगों पर सोयी पड़ी थीं । उसने ग़ौर से देखा । उनमें युवरानी कहीं नहीं थी । फिर वह वहां से बगल वाले कमरे में गया । वहां भी कुछ स्त्रियां सोयी पड़ी थीं ।

अब महेंद्रनाथ एक और कमरे में पहुंचा । वहां एक बड़े से आरामदेह पलंग पर एक युवती सो रही थी । महेंद्रनाथ ने फौरन पहचान लिया कि यही युवती युवरानी है ।

वह युवरानी की ओर बढ़ने को हुआ तो उसके बायें हाथ की एक उंगली में पड़ी अंगूठी एकाएक चमक उठी । वह समझ गया कि इस अंगूठी के बल पर ही वह इन सब बंद दरवाज़ों को खोलकर यहां तक आ सका है । उसने युवरानी के एकदम निकट होकर बड़े हलके से उसके बाजू पर स्पर्श किया ।

युवरानी एकदम चौंक कर उठ बैठी । उसने देखते ही महेंद्रनाथ को पहचान लिया और उससे बोली, "तुम यहां तक कैसे आये?" और फिर बिना कोई प्रश्न किये उसके पीछे-पीछे उस कक्ष से बाहर हो ली ।

महेंद्रनाथ ने उसके प्रश्न के उत्तर में, बस, इतना ही कहा, "आपकी बात का उत्तर में बाद में दूंगा । कल आपके लिए एक पालकी की व्यवस्था की जा रही है । यह व्यवस्था मालिक ने स्वयं करवायी है ।"

"अब वे मुझे कहां ले जाना चाहते हैं?" युवरानी आश्चर्यचकित थी ।

"यह मैं नहीं जानता? लेकिन मैं यह जानना चाहता हूं कि इसमें आपकी रज़ामंदी तो नहीं?" महेंद्रनाथ ने प्रश्न किया ।

"मैं क्यों जाना चाहूंगी? मैं तुरंत अपने माता-पिता के पास लौट जाना चाहती हूं । क्या तुम इस मामले में मेरी मदद कर सकते हो?" युवरानी ने अपनी जिज्ञासा प्रकट की ।

"मैं तो आपको आपके माता-पिता के पास पहुंचाने के उद्देश्य से ही अपने घर से निकला था । इसके लिए मैंने आपके पिताजी से अनुमति भी ले ली थी । आपको अपने बारे में विश्वास दिलाने के लिए मैंने आपके पिता जी से आपका कोई विशेष पहचान-चिह्न भी पूछा था । मुझे उन्होंने बताया कि आपके दायें कंधे पर एक तिल

है जिसके बारे में केवल आप या आपके माता-पिता जानते हैं । मुझे महाराजा ने कहा था कि मैं आपको यह बता दूं ताकि आपको मुझ पर विश्वास हो सके ।" महेंद्रनाथ ने कहा ।

यह सुनते ही युवराती की आंखों में विश्वास की एक चमक पैदा हो गयी । वह बोली, "ठीक है । अब मुझे तुम पर पूरा विश्वास हो गया है । अब देर मत करो । यहां से जल्दी से जल्दी निकल चलो ।"

"मैं भी यही सोचता हूं । यह बेहतर होगा । मेरे पास सिंहद्वार की चाभियां हैं । इसलिए हमें बाहर निकलने में शायद कोई तकलीफ न हो । लेकिन आधी रात के इस वक्त मेरे साथ जंगल की राह चलने में आपको डर तो नहीं लगेगा?" महेंद्रनाथ ने प्रश्न किया ।

"नहीं । डर तो मुझे यहां ज़्यादा लग रहा है । पता नहीं सुबह यह खतरा कैसा रूप ले ले । अब साथ में तो तुम हो ही । अब हमें देर नहीं करनी चाहिए । तुरंत चल पड़ना चाहिए ।" युवरानी के भीतर एक प्रकार की बेचैनी थी ।

"हां, युवरानी जी, आप ठीक कह रही हैं । लेकिन जब तक हम महल से बाहर न हो जायें, आप मेरे पीछे-पीछे आती रहें । आपको पूरी तरह से चारों ओर देखते रहना होगा ताकि किसी की हम पर आंख न पड़ जाये ।" और यह कहकर महेंद्रनाथ आगे बढ़ गया ।

अब तक दोनों महल के सिंहद्वार तक पहुंच चुके थे । चारों ओर भयानक सन्नाटा था । महेंद्रनाथ ने बड़ी सावधानी से सिंहद्वार को खोला, और युवरानी को महल के बाहर कर दिया । उसके साथ वह स्वयं भी महल से बाहर हो लिया, और बाहर से ही उसने सिंहद्वार पर फिर ताला जड़ दिया ।

"इस जादुई महल से हम बाहर तो आ गये हैं, लेकिन हमें जाना किस दिशा में होगा? क्या तुम वीरगिरि का रास्ता जानते हो?" युवरानी ने चलते-चलते महेंद्रनाथ से उत्सुकता से पूछा । (जारी)

देवता कुसुम

अपनी धुन का पक्का राजा विक्रम फिर उस पेड़ के पास गया, पेड़ की शाखा से लटकती लाश को उसने उतारकर अपने क़ंधे पर डाला, और हमेशा की तरह मौन साधे श्मशान को पार करने लगा । तब उस लाश में मौजूद बैताल बोला, "हे राजन्, एक राज्य के राजा होने का सुख आपको पूरी तरह प्राप्त है । फिर भी आप किस सुख की तलाश में आधी रात के समय इस प्रकार भटक रहे हैं और इतना कष्ट उठा रहे हैं? कहीं ऐसा तो नहीं कि आप अतींद्रीय और अलौकिक शक्ति प्रात करके चिर-युवा बने रहना चाहते हैं? यदि यही आपका मंतव्य है तो याद रखिए, इस अतींद्रय-अलौकिक शक्ति से आप जो कुछ भी साधना चाहते हैं, उसका मानव स्वभाव से मेल नहीं बैठता, और वह प्रयत्न भी विफल हो जाता है । उदाहरण के लिए मैं आपको अनंतवर्मा नाम के एक राजा की कहानी सुनाता हूं । आप

वेतालकथा

पूरी लगन से सुनें ताकि आपका ध्यान बंटा रहे और आपको थकान महसूस न हो ।" और यह कहकर बैताल वह कहानी सुनाने लगा :

पुराने जमाने में वैजयंतीपुर पर राजा अनंतवर्मा का शासन था । अनंतवर्मा काफी वृद्ध हो चुका था । उसके कोई संतान न थी । इसलिए उसे हमेशा यही दुःख सताता रहता कि उसकी मृत्यु के बाद उसके राज्य के शासन की बागडोर कौन संभालेगा । उसका दुःख दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा था, क्योंकि उसे अपना अंतिम दिन निकट आता दिख रहा था ।
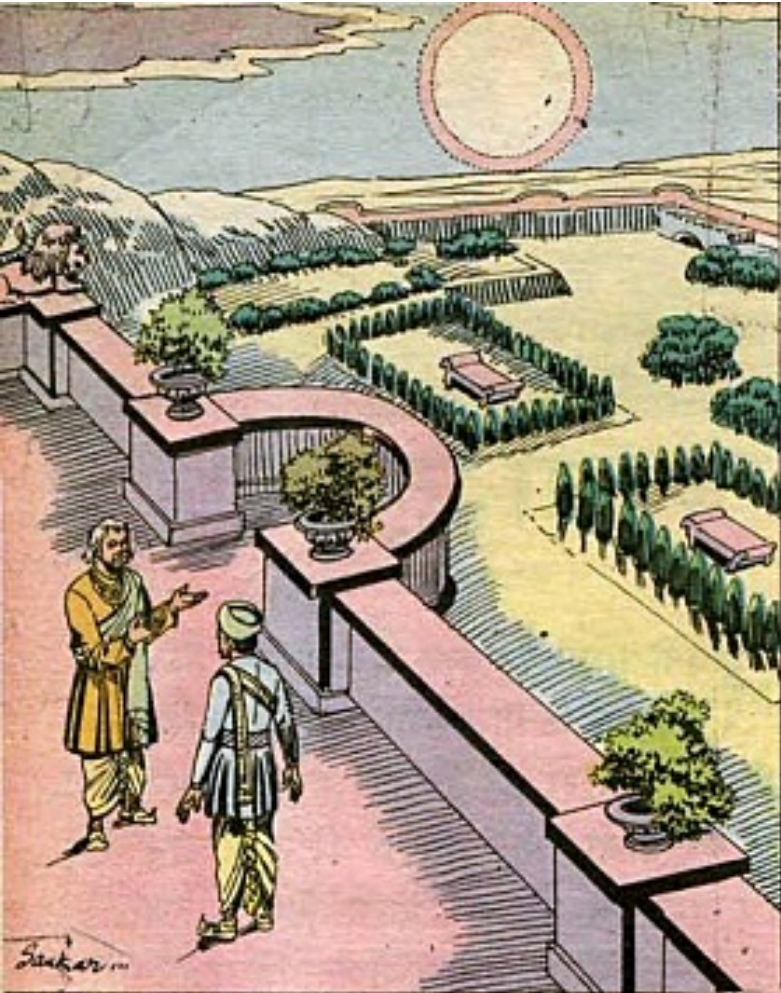
पूनम की रात थी । राजा अनंतवर्मा अपने मंत्री चरणगुप्त के साथ राजभवन की खुली छत पर टहल रहा था । उसी समय राजा को जाने क्या सूझी कि उसने मंत्री से कहा, "देखो चरणगुप्त, यह मनोरम चांदनी, यह मनोहारी उद्यान, यह ऐश्वर्यपूर्ण राजमहल, सब कुछ छोड़कर मुझे शीघ्र ही अज्ञात लोक में जाना होगा ।"

मंत्री चुप्पी साधे वैसे का वैसा खड़ा रहा, बोला कुछ नहीं । इतने में वहां विचित्र घटना घटी । एक पुष्प आकाश मार्ग से होता हुआ आया और उनके सामने आ गिरा । था तो वह पुष्प ही, लेकिन सोने की तरह चमक रहा था ।

राजा ने आश्चर्य से भरकर उस पुष्प को उठाया और उसे सूंघते हुए बोला, "चरणगुप्त, यह तो अद्भुत पुष्प है । इसकी सुगंध का वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं ।"

"राजन्, लगता है यह कुसुमदेव है । आकाश मार्ग से कोई देवकन्या जा रही होगी । उसी के केशों से गिरा होगा । पर इसके पीछे कुछ-न-कुछ प्रयोजन अवश्य होगा । इसके बारे में हमें अपने राजपुरोहित से बात करनी चाहिए ।" मंत्री ने कहा ।

अगले दिन राजपुरोहित ने उस पुष्प को हर प्रकार से परखा और बोला, "महाराज, अमर लोक में गंधर्व और किन्नर स्त्रियों का यह प्रिय पुष्प है । इसका नाम है अमृतवर्धिनी । आयुर्वेद के पंडितों के अनुसार यह वृद्धों को यौवन से भर देता है । कोई युवक या युवती यदि अपने इष्ट देवता का

स्वच्छ मन से ध्यान करके और इस देवपुष्प को सूंघकर अपना यौवन किसी वृद्ध को दान करना चाहे, तो कर सकते हैं। यह पुष्प केवल एक ही व्यक्ति को यौवन उपलब्ध कराने में समर्थ होगा।"

राजपुरोहित की बात सुनकर राजा खुशी से नाच उठा, और अपने मंत्री से बोला, "मंत्री, तुरंत राज्य में ढिंढोरा पिटवा दो कि जो युवक महाराजा को अपना यौवन उपलब्ध करायेगा, उसे राज्य का आधा भाग और अमूल्य उपहार भेंट में मिलेंगे।"

राजा के आदेशानुसार राज्य भर में घोषणा करवा दी गयी। एक सप्ताह बीत गया, लेकिन राजा को अपना यौवन देने के लिए कोई भी युवक सामने नहीं आया। राजा को इससे घोर निराशा हुई।

राजा की हालत पर मंत्री को बड़ा तरस आया। कुछ सैनिकों को साथ लेकर वह राजधानी से बाहर निकला। एक सराय के पास वहां चबूतरे पर उसने दो भिखमंगे बैठे देखे। उनमें से एक भिखमंगा तो अंधा था और दूसरा किसी चर्मरोग से पीड़ित था। मंत्री उनके निकट गया और बोला, "एक सप्ताह पहले महाराजा ने जो घोषणा करवायी थी, क्या तुम्हें उसके बारे में कुछ पता है? महाराजा ने कहलवाया है कि जो युवक उसे अपना यौवन दे देगा, महाराजा उसके बदले उसे आधा राज्य और कई अमूल्य उपहार देगा। आगे आओ और महाराजा का प्रस्ताव स्वीकार करो।"

मंत्री की बात से उन दोनों भिखमंगों में कोई उत्साह पैदा नहीं हुआ। इससे मंत्री को गुस्सा आ गया और बोला, "क्यों, राजा तुम्हें आधा राज्य देगा, वह तुम्हें अच्छा नहीं लगता?"

इस पर अंधा भिखमंगा बोला, "मैं तो अंधा हूं, श्रीमान। मुझे आधा राज्य मिले या पूरा, मेरे किस काम का!"

पहले भिखमंगे ने अभी अपनी बात पूरी की ही थी कि दूसरा भिखमंगा बोल पड़ा, "श्रीमान, मैं अपना यौवन महाराजा को दे देता, लेकिन बूढ़ा होकर मैं उस आधे राज्य का क्या करूंगा। पहले ही मैं इस रोग से काफी पीड़ित हूं। उसके साथ साथ अगर बुढ़ापा भी जुड़ गया, फिर तो मेरे दुःख की

कोई सीमा न रहेगी ।"

भिखमंगों की बातों ने मंत्री को चक्कर में डाल दिया । वह खीझ उठा और वहां से आगे बढ़ गया ।

निराश होकर मंत्री को आखिर, राजमहल लौटना पड़ा । वह जैसे ही वहां पहुंचा, उसने देखा कि महाराजा दरबार में पेश किये गये डाकू रामसिंह के मुकदमे की सुनवाई कर रहा है । उसने देखा कि उस डाकू की उम्र बीस साल से ज़्यादा नहीं है ।

फिर उसने रामसिंह को अपनी सफाई में बोलते सुना, "प्रभु, मैंने हर किसी को नहीं लूटा, केवल उन्हीं को लूटा जो राजधानी में काला धंधा करते हैं, और कुख्यात व्यापारी हैं । उनसे मैंने जितना भी धन लूटा, सारा गरीबों में बांट दिया । मैंने कभी किसी स्त्री को नहीं लूटा । मैंने तभी किसी की जान ली, जब मेरी अपनी जान पर आ बनी ।"

ये सब बातें रामसिंह ने बड़ी निर्भीकता से कही थीं और उसे गौर से देखने पर पता चलता था कि वह सच ही कह रहा है । उस डाकू के उसूलों पर राजा को खुशी हुई । लेकिन था तो वह एक डाकू ही न । इसलिए उसे दंड तो देना ही था, हालांकि वह उसे दंड देना भी नहीं चाहता था । यह सब सोचते हुए राजा असमंजस में पड़ गया ।

उसी समय मंत्री सीधा राजा के पास गया और उससे बड़े धीमे स्वर में बोला, "राजन्, मैंने समूचे राज्य का कोना-कोना छान मारा है । मैंने दो भिखमंगों को भी आधे राज्य का लालच दिया, लेकिन उनमें से एक भी आगे नहीं आया । अब इस अपराधी से

मुझे आशा बंधी है । आप इसे कोई दंड न दें । आप केवल "हां" कह दें, बाकी मैं संभाल लूंगा ।"

राजा तो यौवन पाने की लालसा पाले हुए ही था, इसलिए उसने तुरंत अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी । इस पर मंत्री उस डाकू के निकट पहुंचा और बड़ा सहज होते हुए बोला, "रामसिंह, तुमने जो भी लूटमार की है, उसके दंडस्वरूप तुम्हें फांसी दी जा सकती है, लेकिन...."

मंत्री कुछ और कहना चाहता था, पर रामसिंह ने उसे टोकते हुए थोड़ा मुस्करा कर कहा, "मैं अगर महाराजा को अपना यौवन देने के लिए तैयार हो जाता हूं तो मेरी यह सज़ा रद्द हो सकती है, और मुझे आधा राज्य भी मिल जायेगा । यही आप मुझसे कहना चाह रहे हैं न!"

डाकू की बुद्धि पर मंत्री चकित रह गया । उसने अपने को और संयत किया और बोला, "तुमने मेरे मन की बात खूब पकड़ी । तुम्हारा कल्याण हो । अब बताओ, क्या तुम इसके लिए राजी हो?"

मंत्री का प्रश्न सुनकर रामसिंह ज़ोर से हंसा और कहने लगा, "महाराजा अगर साफ मन से मुझे क्षमा करते हैं तो मैं उनकी सहृदयता पर अपनी कृतज्ञता व्यक्त किये बिना न रह सकूंगा । कानून के मुताबिक यदि उन्होंने मुझे दंड दिया तो मुझे उनकी ईमानदारी पर गर्व होगा । लेकिन इन दोनों में से अगर एक भी बात न हुई तो मुझे दुःख होगा, क्योंकि मेरा समूचा अनुमान गलत हो जायेगा । महाराजा की घोषणा
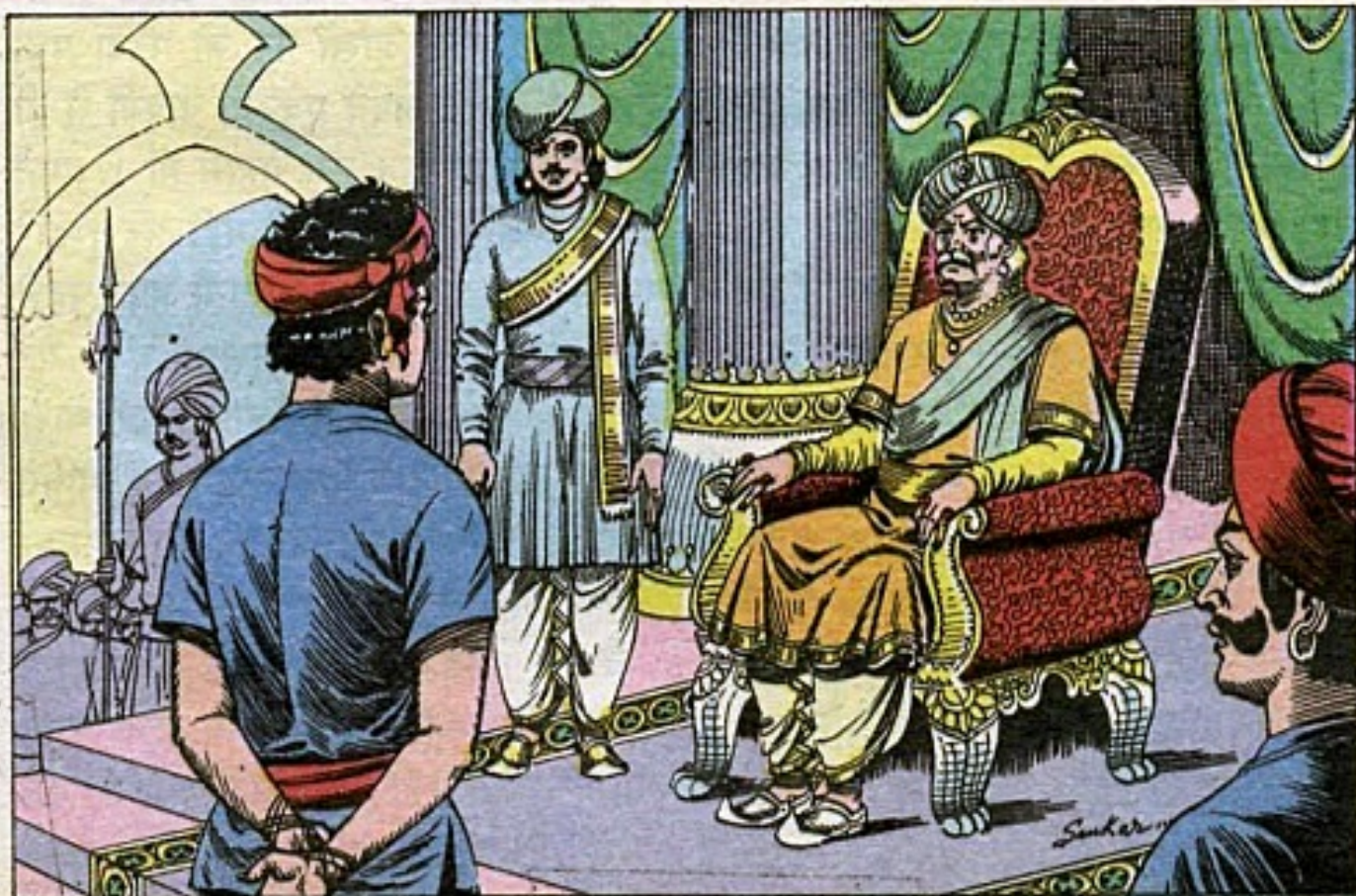
मैंने भी सुनी थी, और मैंने निश्चय भी किया था कि मैं अपना यौवन महाराजा को दे दूंगा और इसी विचार से मैं स्वयं प्रयास करके सैनिकों के हाथों पकड़ा गया । लेकिन अब मैंने अपना निश्चय बदल दिया है । यहां तो स्वार्थ ही सब से आगे है । और यदि कोई प्रयोजन स्वार्थ से प्रेरित हो तो मैं इसे नीच से नीच प्रवृत्ति कहूंगा । हमारे महाराजा में इस समय वही प्रवृत्ति काम कर रही है ।"

डाकू की बातों पर राजा आग बबूला हो गया और बोला, "तुमने जिस प्रकार के अधम अपराध किये हैं, मैं अभी तुम्हें उनके दंडस्वरूप फांसी पर लटकवाये देता हूं ।"

पर रामसिंह इससे ज़रा भी विचलित न हुआ, बल्कि बड़े सहज ढंग से बोला, "आप यदि इसी को न्याय कहते हैं तो ठीक है । आपके मन में जो आता है, वही कीजिए । लेकिन एक बात जान लीजिए कि आपके इस दंड से डरकर मैं आपके मंत्री का प्रस्ताव कभी स्वीकार नहीं करूंगा । अगर आप सोचते हैं कि मैं डर जाऊंगा तो यह आपका सरासर भ्रम है ।"

डाकू रामसिंह ने जिस साहस के साथ अपनी बात कही थी, उससे राजा की आंखों पर पड़ा परदा हट गया । एक बार तो वह सकते में आ गया । अपमान-बोध ने उसके चेहरे का रंग बदल दिया था । वह कुछ देर तक तो अपने सिंहासन पर स्तब्ध बैठा रहा, फिर धीरे-धीरे उसके आवेश का अंत हुआ और वह शांतचित्त होकर रामसिंह की ओर बढ़ा । अब उसने उसे बड़े प्यार से अपनी बाहों में भर लिया और उससे बोला, "रामसिंह, मेरी आंखों पर जो परदा पड़ा हुआ था, तुमने अपने एक-दो वाक्यों से ही उसे हटा दिया है । तुम महान हो । अपने जीवन के अंतिम समय में ही सही, पर तुम्हारे साथ इस तरह रूबरू हो जाना मैं अपने पहले जन्म का कोई पुण्य समझता हूं । मेरे सिंहासन का अब तक कोई वारिस नहीं था । मैं तुम्हें ही इसी क्षण अपना वारिसव घोषित करता हूं । मैं तुम्हें सिंहासन पर बिठाकर स्वयं संन्यास ले रहा हूं ।"

बैताल ने यह कहानी सुनाकर राजा विक्रम से कहा, "राजन्, वृद्धावस्था में राजा अनंत वर्मा के मुंह से ऐसी बातें सुनना क्य मतिभ्रम

नहीं लगता? जो व्यक्ति लूटमार करके दूसरों की जान भी ले सकता हो, क्या उसे महान कहकर अपने गले लगाना तर्कसंगत लगता है? एक डाकू को राजसिंहासन पर बिठा देना क्या घोर मूर्खता नहीं है? चलो, मान लिया एक डाकू को सिंहासन पर बिठा दिया गया। लेकिन राजा ने स्वयं संन्यास लेने की क्यों सोची? मुझे इन संदेहों का समाधान चाहिए। अगर जानते हुए भी आप चुप रहेंगे तो आपका सर फट जायेगा।''

बैताल के प्रश्न सुनकर राजा विक्रम बोला, ''राजा अनंतवर्मा का व्यवहार और उसकी बातें सुनकर हमें पता चलता है कि वह एक संस्कारवान, प्रकृतिप्रिय और कला-प्रिय राजा था। ये उसके सहज गुण थे, लेकिन ऐसे व्यक्ति भी कभी-कभी किसी आवेग के तहत किन्हीं मानसिक दुर्बलताओं के शिकार हो जाते हैं। इस क्षणिक आवेग को मतिभ्रम कहना ठीक नहीं होगा। समूची सृष्टि के जीव प्रकृति के नियमों के अनुसार चलते हैं। यह एक सच्चाई है। लेकिन यौवन की लालसा में पड़कर कुछ समय के लिए अनंतवर्मा इस सचाई को पहचान न सका। उधर अपनी जान का मोह त्याग कर डाकू मानसिंह ने जिस निर्भीकता से अपनी बात कही थी, उससे राजा जैसे कि वह सोते से जाग उठा। संस्कार और त्याग की भावना वाला डाकू राजा की दृष्टि में महान हो गया और यही कहकर उसने उसे संबोधित किया, और इसी भावना के वशीभूत होकर उसने उसे सिंहासन भी दे दिया। राजा अनंतवर्मा यह तो समझता ही था कि मृत्यु अवश्यंभावी है। इसलिए उसने उसे खुले मन से आमंत्रित किया और अपने मन की शांति के लिए संन्यास लेना ही ठीक समझा।''

बैताल को उत्तर देने से राजा विक्रम का मौन भंग हो चुका था। इसलिए बैताल लाश समेत रहां से फौरन अदृश्य हो गया और फिर उसी पेड़ की शाखा से जा लटकने लगा। (कल्पित)

(आधार: आर.पी.आर. राम की रचनां)

अनोखा उपचार

एक गांव था नामवर । उसमें अधिकतर गरीब किसान ही रहते थे । वहां एक छोटा सूदखोर सेठ भी था । वह देखते ही देखते धनवान बन गया था, और देखते ही देखते उसकी चार-मंज़िली इमारत भी खड़ी हो गयी थी । बड़ा ऐश्वर्यपूर्ण जीवन जीने लगा था वह ।

यह सब उसी गांव के एक बड़े सेठ को बरदाश्त नहीं हुआ । छोटे सेठ के ऐश्वर्य और वैभव पर उसकी ईर्ष्या जग गयी । उसने जानना चाहा कि इस वैभव के पीछे रहस्य क्या है । उसे पता चला कि छोटा सेठ भोले-भाले, ज़रूरतमंद किसानों को दोनों हाथों से लूटता है और सौ रुपये पर बीस-पच्चीस रुपये माहवार तक सूद ऐंठ लेता है ।

बड़े सेठ ने अब ठान लिया था कि वह छोटे सेठ को एक बार तगड़ी पटखनी देगा, वरना वह चैन की नींद नहीं सो पायेगा ।

इसी निश्चय के साथ बड़ा सेठ सीधा गांव के पटेल के पास पहुंचा और उससे छोटे सेठ की शिकायत करते हुए बोला, "वह, वह तो बेहिसाब ब्याज वसूल कर रहा है, और गरीब किसानों के प्रति अन्याय कर रहा है । उसे किसी न किसी तरह रोका जाना चाहिए ।"

पटेल तो छोटे सेठ से पहले ही मिला हुआ था, और उससे समय-समय पर कुछ-न-कुछ प्राप्त भी करता रहता था । इसलिए उसने बड़े सेठ की शिकायत पर कोई ध्यान नहीं दिया और हंसकर उसे टाल दिया ।

बड़ा सेठ चुप बैठने वाला नहीं था । वह अब सीधा राजा के पास जा पहुंचा और उसे सारी बात कह सुनायी ।

बड़े सेठ से छोटे सेठ और पटेल की कारगुज़ारी सुनकर राजा ने कहा, "अच्छा, मैं तुम्हारे गांव में एक पाठशाला खुलवाये देता हूं, और वहां पर एक योग्य अध्यापक की नियुक्ति करवाये देता हूं ।"

राजा की बात पर बड़ा सेठ चौंका । बोला, "महाराज, मैंने गांव के लिए पाठशाला की मांग तो नहीं की । मैं तो आप से छोटे सेठ और पटेल की मिलीभगत की बात कर रहा था, जो गरीब लोगों को लूटकर खा रहे हैं । आप उस पर ध्यान दीजिए ।"

बड़े सेठ की बात पर राजा हंसने लगा, और हंसते-हंसते बोला, "तुम्हारे गांव की जनता अनपढ़ और अबोध है । इसीलिए छोटे सेठ जैसे लोगों के हाथों वह प्रताड़ित हो रही है । अगर मैं उस सेठ को दंड भी देता हूं तो उसकी जगह एक और सेठ पैदा हो जायेगा और ऐसे लोगों का जनता को धोखा देना जारी रहेगा । इस समस्या का सही उपचार तो जनता का शिक्षित होना ही है । शिक्षित हो जाने से वह व्यवहार-कुशल भी हो जायेगी और किसी से ऐसे ही धोखा नहीं खायेगी । इसीलिए मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं । अब तुम निश्चिंत होकर अपने घर लौट जाओ ।"

—एस. लोकेश्वरी

चन्दामामा परिशिष्ट-५१

भारत के पशु-पक्षी

बकवादी पक्षी

पक्षी आम तौर पर चुप रहते हैं । लेकिन बकवादी पक्षी नहीं । ये तो रात के समय भी कुछ न कुछ बकवाद करते ही रहते हैं । और जब ये इकट्ठे होकर बैठें, तब तो यह बकवाद और भी बढ़ जाती है ।

कुछ पक्षी-विशेषज्ञों का विश्वास है कि यह बकवाद शत्रुओं को दूर रखने के उद्देश्य से की जाती है । लेकिन जितना शोर ये पक्षी मचाते हैं, उसका जवाब नहीं । इनकी एक विशेषता और भी है-ये जो कुछ भी करते हैं, मिलकर ही करते हैं । अपना खाद्य पदार्थ ढूंढ़ने के लिए भी ये इकट्ठे जाते हैं । अंडे भी इकट्ठे सेते हैं और बच्चों का लालन-पालन भी इकट्ठे ही करते हैं । एक-दूसरे के परों की सफाई भी ये मिलकर करते हैं ।

अब ज़रा किसी बकवादी पक्षी को पिंजरे में बंद करके देखो । बाकी के पक्षी भी पिंजरे को घेर लेंगे, उसे आजाद करवाने के लिए नहीं, बल्कि उस "भाग्यवान" का पिंजरे में साथ देने के लिए । इसे कहते हैं मिलकर काम करना । आम तौर पर एक समूह में छः या सात पक्षी होते हैं, ज़्यादा नहीं । इसीलिए इन्हें "सात बहनें" भी कहा जाता है ।

जंगली बकवादी पक्षी की लंबाई लगभग दस इंच (२५ सें.मी.) होती है । इसका रंग हलका-भूरा होता है, और इसके निचले हिस्से पर पीली-सी राख का रंग होता है । इसकी आंखों की पलकें सफेद होती हैं जिन पर पीले रंग का छींटा रहता है । चोंच और पांव प्याजी-गुलाबी रंग के होते हैं ।

यह पक्षी ऊंचा बहुत कम उड़ता है । अपना घोंसला भी बहुत ऊंचे पेड़ पर नहीं बनाता, लेकिन खूब पत्तेदार शाखाओं को ढूंढ़ता है ।

दक्षिण में पाये जानेवाले इस पक्षी का आकार उत्तर में पाये जानेवाले पक्षी से बड़ा होता है । जंगल में तो ये पक्षी बहार ले आते हैं ।

आज का भारत : साहित्य-दर्पण में

क्या कोई उपन्यास ऐसा भी हो सकता है जिसकी कथावस्तु स्पष्ट न हो? हां, होते हैं । अगर तुमने 'पत्थुम्मायुडे आडू' पढ़ा है तो तुम इस उत्तर से सहमत हो जाओगे । यह मलयालम में है और इसके लेखक हैं-वैकोम मोहम्मद बशीर ।

लेखक ने यह कहानी प्रथम पुरुष में लिखी है । कई वर्षों तक भटकते रहने के बाद वह अपने गांव में अपने घर वापस आ गया है । बाकी का जीवन अब वह वहीं बिता देना चाहता है । उसकी कई पुस्तकें छप चुकी हैं, और लेखक के नाते उसकी काफी ख्याति है ।

एक बकरी की गाथा

लेकिन उस छोटे-से घर में कई प्राणी हैं—उसकी मां है, दो भाई हैं, उनकी बीवियां और बच्चे हैं, उसका एक अविवाहित, सब से छोटा, भाई है । एक बहन और उसका पति भी है । इसके अलावा वहां कई बिल्लियां, चूहे और मुर्गाबियां हैं ।

जैसे कि यह सब काफी न हो, वहां एक अन्य प्राणी भी है जिसे घर के भीतर आने-जाने की पूरी छूट है । वह एक बकरी है ।

लेखक को यह देखकर हैरानी होती है कि वह बकरी उसके बिस्तर पर सीधे चढ़ गयी है और उसके द्वारा लिखी दो पुस्तकों को चबा गयी है । लेखक यह तो बरदाश्त कर जाता है, लेकिन उसे तब कुछ-न-कुछ करना ही पड़ता है जब वह जीव साहित्य से संतोष न करके पचास रुपये की कीमत वाले उसके कंबल को भी चट करने का फैसला करता है ।

लेखक को पता चलता है कि यह विशेषाधिकार-प्राप्त जीव उसकी बहन पत्थुम्मा का है जो उसी गांव में अपने परिवार के साथ रहती है । पूरे विवरण में बकरी बराबर प्रस्तुत रहती है और समय-समय पर अजीबो-गरीब स्थितियां पैदा करती रहती है-जैसे मिट्टी के बर्तन में अपना सर घुसेड़ देना । लेकिन उसे बाहर निकालने में असफल रहता जिससे मजबूर होकर दूसरे लोग उस समस्या का समाधान खोजें और

उस बर्तन को तोड़ दें ।

लेखक ने तो यह सोचा था कि वह आराम से यहां रहकर लेखन में ही अपना सारा समय बितायेगा, लेकिन उसका यह स्वप्न छिन्न-भिन्न हो जाता है । उसकी मां, उसकी बहनें और इधर-उधर के रिश्तेदार, सब उससे आर्थिक सहायता चाहते हैं, लेकिन हर कोई यह भी चाहता है कि इस बात की खबर और किसी को न लगे ।

पत्थुम्मा के अपने स्वप्न हैं । उसकी बकरी जल्दी ही बच्चा जनने वाली है । इसका अर्थ होगा दूध ही दूध । वह इसे बेच डालेगी और अच्छी कमाई कर लेगी ।

आखिर, वह बकरी एक प्यारे से सफेद मेमने को जन्म देती है । लेकिन पत्थुम्मा के रिश्तेदार उसे चोरी-छिपे दोहने लगते हैं । हां, इस चुराये गये दूध से परिवार के कई लोगों को चाय के लिए अपना हिस्सा मिल जाता है ।

उपन्यास छोटा-सा है । इसका बाकी हिस्सा लेखक की अपने बचपन की यादों से जुड़ा हुआ है । इन यादों में उस रिश्तेदार की भी यादें हैं जो तब तक घर छोड़कर सेना में शामिल हो जाने की धमकी देता रहता था जब तक कि उसकी मांगें पूरी न हो जायें, वगैरह, वगैरह । इसमें जीवन की छोटी-छोटी विडंबनाओं का भी उल्लेख है । उदाहरण के लिए जब वहां के स्थानीय हाई स्कूल की छात्राएं उसे एक विख्यात उपन्यासकार मानकर उसकी ओर देखती रहती हैं, तो वह मन ही मन फूला नहीं समाता । लेकिन अफसोस, वे उसे नहीं देख रही होतीं । वे उसके पीछे बेरों से लदे पेड़ को देख रही होती हैं ।

हास्य से भरपूर और हलकी-फुलकी शैली में लिखा यह उपन्यास केरल के एक मुस्लिम परिवार की जीती-जागती तसवीर पेश करता है । इसमें गरीब लोगों के जीवन की छोटी-छोटी उम्मीदों और इच्छाओं का भी चित्रण है ।

वैकोम मुहम्मद बशीर का जन्म १९१० में हुआ था । हमारे समय के मलयालम कथा-लेखन में उसने एक नयी शुरुआत की है ।

क्या तुम जानते हो?

१. दिल्ली भारत की राजधानी कब बनी? तब तक यह राजधानी कहां थी?
२. रोडेशिया का नया नाम क्या है?
३. खेलों में सबसे पुराने खेल का नाम बताओ ।
४. भारत राष्ट्रीय कांग्रेस की पहली महिला अध्यक्ष कौन थी?
५. पहला रोबो कब तैयार हुआ?
६. जयहिंद का नारा किसने दिया?
७. भारत के उपराष्ट्रपति और क्या भूमिका निभाते हैं?
८. ज़ेब्रा की मुख्य विशेषता क्या है?
९. राजतरंगिनी में किन राजाओं का इतिहास है?
१०. भारत में पहला डाक टिकट कब जारी हुआ?
११. चॉकलेट बनाने वाली किस कंपनी ने अपना एक गांव भी बनाया है?
१२. इटली का राष्ट्रीय पुष्प कौन-सा है?
१३. गीत गोविंद का रचयिता कौन था?
१४. "दास कैपिटल" विश्व के महानतम् ग्रंथों में अपना स्थान रखता है । इसका लेखक कौन था?
१५. अमरीका के राष्ट्रपति का निवास, "व्हाइट हाउस", सफेद क्यों पोता गया?

उत्तर

१. १९११; कलकत्ता ।
२. ज़िंबाबवे ।
३. पोलो; यह पहली शताब्दी में फारस (अब ईरान) में खेला जाता था ।
४. डॉ. ऐनी बेसंट । इन्होंने १९१७ के कांग्रेस अधिवेशन की अध्यक्षता की ।
५. अमरीका की एक फर्म जिसका नाम यूनीमेशन है । कहा जाता है कि इसने तीस वर्ष पहले, यानी १९६२ में, पहला रोबो तैयार किया था ।
६. नेताजी सुभाषचंद्र बोस ।
७. राज्य सभा के सभापति के रूप में ।
८. किसी भी ज़ेब्रा की दूसरे ज़ेब्रा जैसी धारियां नहीं होती ।
९. कश्मीर के राज़ा ।
१०. १८५२ में कराची में, जो कि तब भारत में था ।
११. कैडबरी, बोर्नविले ।
१२. कुमुदिनी ।
१३. जयदेव ।
१४. कार्ल मार्क्स ।
१५. एक आग दुर्घटना में हुई क्षति को छिपाने के लिए ।

नेक दामाद

एक गांव था एकतापुर जिसमें शंभु नाम का एक धनवान रहता था। उसके एक ही बेटी थी जिसका नाम मंदाकिनी था।

मंदाकिनी बड़ी सुंदर थी। एक तरफ मंदाकिनी का सौंदर्य और दूसरी तरफ उसके पिता का वैभव, इन दोनों के कारण हर संपन्न परिवार यही चाहता था कि उन्हीं के यहां मंदाकिनी बहू बन कर आये। चारों ओर से प्रस्ताव भी आ रहे थे।

लेकिन मंदाकिनी किसी और को चाहती थी। जिसे वह चाहती थी, उसका नाम था रामचंद्र। वह मंदाकिनी के पिता के यहां ही काम करता था।

राममचंद्र आचरण का पक्का था। झूठ बोलना तो उससे कोसों दूर था। उसका अपना कोई नहीं था। इसीलिए वह शंभु के यहां ही टिक गया था और उसकी हर काम में मदद करता था।

मंदाकिनी ने अपने बेटी के लिए वर ढूंढने के प्रयास में पिता को देखकर एक दिन उससे कह ही दिया कि वह रामचंद्र से विवाह करना चाहती है। बेटी की बात सुनकर पहले तो पिता हतप्रभ रह गया, फिर उसने उसे खूब डांटा। वह काफी देर तक सोचता रहा, और आखिर उसने रामचंद्र के सर कोई अपराध मढ़कर उसे काम से निकाल दिया।

रामचंद्र लाचार था। वह गांव छोड़कर कहीं चला गया। मंदाकिनी और उसकी मां को जब इसका पता चला तो वे शंभु की हरकत पर बड़ी परेशान हुई। मंदाकिनी ने तो हठ ही पकड़ लिया कि वह शादी करेगी तो रामचंद्र से ही। उधर मां भी बेटी के पूरी तरह साथ थीं।

शंभु अब मजबूर हो गया। उसे रामचंद्र की तलाश में निकलना ही पड़ा। पर रामचंद्र का कोई सुराग न मिल पाया। एक तरह से तो यह शंभु को अच्छा ही लगा।

इसी तरह दो वर्ष बीत गये। अब रामचंद्र

शंभु के यहां उसके काम में हाथ बंटाने को तो था नहीं । इसलिए उसके काम पर भी इसका बुरा असर पड़ा । इससे उसका स्वास्थ्य भी बिगड़ने लगा ।

उधर मंदाकिनी भी किसी और से विवाह करने को तैयार न थी । यह सब देखते हुए शंभु की पत्नी ने ही बेटी को किसी तरह समझा-बुझाकर उसे शादी के लिए राज़ी कर लिया । इससे शंभु बहुत खुश हुआ और उसने मंदाकिनी के लिए वर ढूंढना शुरू कर दिया ।

दूर के एक गांव में एक करोड़पति था धर्मराज । उसका एक बेटा था जिसके साथ मंदाकिनी के रिश्ते की बात चल पड़ी । इसलिए शंभु अपने साथ एक सम्मान्य व्यक्ति को लेकर धर्मराज के गांव की ओर चल पड़ा । जिस समय वह वहां पहुंचा, धर्मराज का बेटा घर पर नहीं था ।

धर्मराज ने शंभु और उसके साथी की खूब आवभगत की और फिर कहने लगा, "मैं अभी अपने बेटे को खबर किये देता हूं । आप शायद जानते ही हैं कि हम खेती के साथ-साथ व्यापार भी करते हैं । मेरे बेटे की व्यापर में ही ज़्यादा रुचि है ।" फिर उसने अपने नये गुमाश्ते को बुलाया और आदेश दिया कि अपने बेटे को बुला लाये ।

लेकिन जैसे ही वह गुमाश्ता शंभु के सामने आया, वह उसे देखकर हैरान रह गया । यह गुमाश्ता और कोई नहीं, रामचंद्र ही था । उसे वहां अचानक देखकर शंभु घबरा-सा गया । लेकिन रामचंद्र ने शंभु

के साथ बड़े आदर और स्नेह से बात की और घर के प्रत्येक व्यक्ति का कुशल-क्षेम पूछा ।

यह देखकर धर्मराज ने शंभु से कहा, "इसे मैंने कुछ दिन पहले ही काम पर रखा है । लगता है पहले यह आपके यहां काम कर चुका है ।" और इसके साथ ही उसने रामचंद्र की ओर मुडकर एक बार फिर कहा कि जल्दी से उसके बेटे को बुला लाये ।

धर्मराज का दो बार आदेश पाकर रामचंद्र ने हौले से कहा, "वह अब नहीं आयेंगे ।"

"आयेगा क्यों नहीं? उससे कहना कि वह अपने व्यापार के मामले को बाद में देख ले । उससे यह भी कहना कि उसे लड़की वाले देखने आये हैं ।" और इसके साथ ही धर्मराज ने कुछ संकेत भी किया ।

लेकिन रामचंद्र ने उस संकेत पर ध्यान नहीं दिया, बल्कि अपनी ही रौ में कहता गया, "वह इस समय नीलवेणी के यहां होंगे । वह आना चाहेंगे तब भी नीलवेणी नहीं आने देगी ।"

"यह नीलवेणी कौन है?" आश्चर्य के साथ शंभु ने उसकी ओर देखा ।

धर्मराज को लगा कि उसे स्थिति संभालनी चाहिए । इतने में रामचंद्र फिर बोल पड़ा, "नीलवेणी मंजुवाणी की बेटी है । कुछ दिन पहले छोटे मालिक ने कुछ उलटा-सीधा पी लिया था जिससे उन्हें बहुत ज्यादा नशा हो गया, और वह वहीं रास्ते में गिर पड़े । तब नीलवेणी और मंजुवाणी ने ही उन्हें संभाला था, और अपने घर में ले जाकर लिटा दिया था । तब से ऐसा ही चल

रहा है । मंजुवाणी अब हर किसी से कहती है कि छोटे मालिक उसके होनेवाले दामाद हैं ।"

यह सुनते ही असली बात शंभु की समझ में आ गयी । वह एकदम गुस्से में आ गया और धर्मराज की ओर घूरने लगा । उधर धर्मराज भी उसी प्रकार गुस्से से भरकर रामचंद्र की ओर देखने लगा ।

अब शंभु के लिए कोई चारा न था, सिवाय इसके कि वह चुपचाप वहां से बाहर हो ले ।

अभी शंभु ने बाहर कदम रखा ही था कि धर्मराज ने मारे गुस्से के रामचंद्र को गर्दन से पकड़कर बाहर धकेल दिया, और बोला, "अरे बुद्धिहीन, तुझे बिलकुल भी समझ नहीं । तू तो मेरे घर को बरबाद करके रख देगा । चल, निकल इसी पल यहां से ।"

रामचंद्र धकियाये जाने के कारण गिरने को ही था कि शंभु ने उसे संभाल लिया और बोला, "चलो बेटा, अपने घर चलें!"

धर्मराज वहीं चबूतरे पर खड़ा था । उसने शंभु को सावधान करने के अंदाज़ में कहा, "इसकी बातों में बिलकुल मत आना ।"

धर्मराज की चेतावनी पर शंभु को हंसी आ गयी । वह बोला, "आप रामचंद्र के बारे में कह रहे हैं? आपको बताने की ज़रूरत नहीं । इसे हम बहुत पहले से जानते हैं । यह जान दे देगा, पर झूठ नहीं बोलेगा । यह मेरी ही भूल थी कि मैंने इसे यों ही घर से निकाल दिया । मैं तो इसके घर से चले जाने के कारण बहुत चिंता में था । इसके बिना मेरी बेटी की ज़िंदगी बरबाद हो जाती । इसे अब मैं अपने सहायक के रूप में नहीं, अपने दामाद के रूप में अपने साथ ले जा रहा हूं ।" और इन्हीं शब्दों के साथ वह आगे बढ़ गया ।

रामचंद्र को शंभु के साथ लौटे देखकर शंभु की पत्नी और उसकी बेटी बहुत खुश हुए । फिर शुभ मुहूर्त निकलवाकर उसका विवाह बड़ी धुमधाम से मंदाकिनी के साथ कर दिया गया ।

पुराने ज़माने की बात है। रूस में एक बुढ़िया रहती थी। उसके दो बेटे हुए। एक का तो बचपन में ही देहांत हो गया था और दूसरा दूर देश में चला गया।

एक दिन बुढ़िया के घर एक सिपाही आया और कहने लगा, "मां जी! रात काफी हो आयी है। क्या आप मुझे रात-भर के लिए सर छिपाने की जगह देंगी? सुबह होते ही चला जाऊंगा।"

"कोई बात नहीं, बेटा, आ जाओ, आ जाओ।" बुढ़िया ने उस सिपाही से कहा। "लेकिन यह तो बताओ, तुम आ कहां से रहे हो?"

"मैं दूसरे लोक से आ रहा हूं, मां जी," सिपाही ने उत्तर दिया।

"सच। मेरा भी एक बेटा वहां कुछ समय पहले चला गया था। तुमने उसे वहां कहीं देखा तो नहीं?" बुढ़िया ने पूछा।

"क्यों नहीं देखा? वह और मैं एक ही कमरे में तो रहते थे।" सिपाही ने कहा।

"सच।" बुढ़िया ने आश्चर्य से कहा।

"आपका बेटा उस लोक में बगलों की रखवाली करता है।" सिपाही ने कहा।

"उफ! बेचारा! कितनी तकलीफ पा रहा है, मेरा बेटा वहां! "बुढ़िया के मुंह से निकाला।

"हां, मां जी, बहुत तकलीफ पा रहा है, बेचारा। वे बगुले अक्सर कांटेदार झाड़ियों में चले जाते हैं, और आपके बेटे को उनका पीछा करते-करते वहां जाना ही पड़ता है।" सिपाही ने कहा।

"ओह! तब तो उसके सारे कपड़े फट गये होंगे?" बुढ़िया ने पूछा।

"हां, वहां उसके सारे कपड़े चीथड़े हो गये हैं, मां जी," सिपाही ने फिर कहा।

"बेटा, मेरे पास एक कपड़ा पड़ा है जो लगभग चालीस गज होगा। कुछ पैसा भी है। क्या तुम वह सब मेरे बेटे को दे दोगे?"

रूसी लोककथा
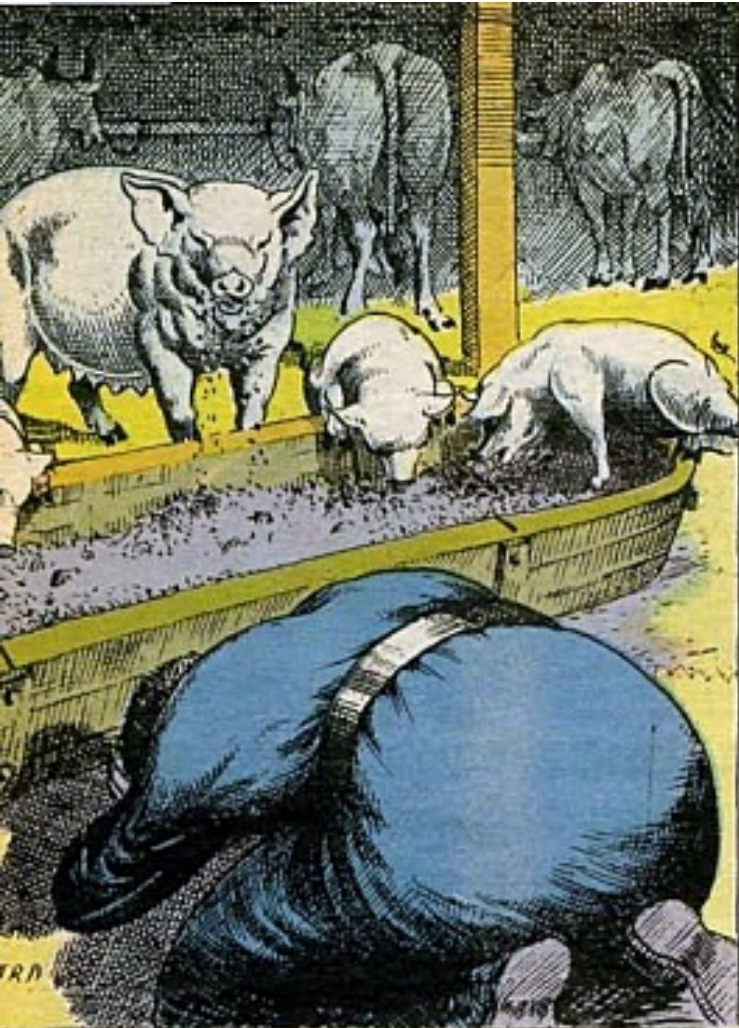
बुढ़िया के स्वर में अनुरोध था ।

"क्यों नहीं, मां जी । ज़रूर दे दूंगा ।" सिपाही ने बड़ी विनम्रता से उत्तर दिया ।

उस रात वह सिपाही बुढ़िया के घर ही सोया, और दूसरे दिन उससे कपड़ा और नकद लेकर मज़े-मज़े अपनी राह हो लिया ।

इस घटना को बीते अभी कुछ ही दिन हुए थे कि बुढ़िया का दूसरा बेट लौट आया ।

बुढ़िया ने कहा, "बेटे, जब तुम यहां नहीं थे, तब एक सिपाही दूसरे लोक से आया था और तुम्हारे बड़े भाई का समाचार दिया था । उसके हाथों मैंने तुम्हारे बड़े भाई के लिए कपड़ा और कुछ रकम भेजी है ।"

"बड़ा महान काम किया है तुमने, मां । तुम्हें धोखा देकर उसने तुम्हें अच्छी तरह लूटा है । तुम्हारे जैसे भाले-भोले और कितने लोग हैं, मैं यह पता लगा कर ही लौटूंगा ।" और यह कहकर वह चला गया ।

बुढ़िया के बेटे ने जंगल पार किया और एक गांव में ज़मींदार की हवेली की बगल में मवेशीखाने के सामने जा खड़ा हुआ । उस मवेशीखाने के पास एक सूअरी अपने बच्चों के साथ कुछ खा रही थी । बुढ़िया के बेटे ने उस सूअरी को झुककर नमस्कार किया ।

ज़मींदार की पत्नी ने यह सब देख लिया था । उसने अपनी नौकररानी को बुलवाया और कहा, "जाओ, जाकर देखो, वह लड़का सूअरी से क्या कह रहा है?"

नौकरानी बुढ़िया के बेटे के पास गयी और उससे बोली, "तुमने हमारी सूअरी के सामने इस तरह झुककर नमस्कार क्यों किया?"

इस पर बुढ़िया के बेटे ने कहा, "कृपामयी, यह सूअरी मेरी पत्नी की दूर की रिश्तेदार है । कल मेरे बेटी की शादी होने जा रही है । वहां कई काम होंगे । मैं इसे और इसके बच्चों को लिवाने आया हूं । मुझे तुम्हारी मालकिन से इन्हें लिवा ले जाने की आज्ञा चाहिए ।"

नौकरानी ने ज़मींदार की पत्नी को जब यह समाचार दिया तो उसने हंसकर कहा, "यह सूअरी और उसके बच्चों को शादी पर लिवाने आया है । ठीक है, हमारा क्या जाता है, खुद ही बेवकूफ बनेगा । चारों तरफ इसकी भद्द होगी । तुम सूअरी को

ऊनी कोट पहना दो, उसे तथा उसके बच्चों को बग्घी में ठाठ से बिठाकर भेज दो ।"

सुअरी और उसके बच्चों को वैसे ही ठाठ से बग्घी में बिठा दिया गया और बग्घी के घोड़ों की लगाम बुढ़िया के बेटे के हाथों थमा दी गयी । बुढ़िया का बेटा जब घोड़ों को हांककर सूअरी और उसके बच्चों को बग्घी में लिये जा रहा था तो हवेली के ऊपरी तल्ले पर बैठी ज़मींदार की पत्नी यह सब देखकर हंसे जा रही थी ।

ज़मींदार उस समय शिकार पर गया हुआ था । वह जब लौटा तो उसकी पत्नी ने हंसी से लोटपोट होते हुए सूअरी का सारा किस्सा कह सुनाया । "ओह! आप भी यहां होते तो आपको बहुत मज़ा आता । उस लड़के ने हमारी सूअरी को ऐसे झुक-झुककर नमस्कार किया कि हंसते-हंसते हमारे पेट में बल पड़ गये । उसने यह भी कहा कि हमारी सूअरी का उसकी पत्नी से रिश्ता है और उसे ही उनके यहां शादी के मौके पर हर काम-काज की निगरानी करनी है, और उसके बच्चों को गौनहार बनकर दुल्हन के साथ उसके ससुराल जाना है । उन्हें अपने साथ लिवा ले जाने की मुझसे आज्ञा चाह रहा था ।"

"और तुमने दे दी! और उसके साथ अपनी सूअरी और उसके बच्चों को भी भेज दिया! है न?" ज़मींदार ने कटाक्ष करते हुए कहा ।

"हां, मैंने सूअरी को अपना कोट पहनाकर और अपनी बग्घी में बिठाकर बड़े ठाठ से

विदा किया ।" ज़मींदार की पत्नी बोली ।

"अच्छा । वह लड़का रहता कहां है?" ज़मींदार ने फिर से पूछा ।

"मैं क्या जानूं?" पत्नी बोली ।

पत्नी का उत्तर सुनकर जमींदार गुस्से में आ गया और उसी गुस्से में बोला, "तुम तो ठग ली गयी हो ।" और फिर वह फौरन अपने घोड़े पर सवार होकर उस लड़के की तलाश में निकल पड़ा ।

बुढ़िया का बेटा उस समय जंगल में था । उसे जब घोड़े की टापें सुनाई दीं तो वह सावधान हो गया । उसने बग्घी को तो झाड़ियों में छिपा दिया और अपनी टोपी को वहां सड़क पर उलटा रखकर वहीं पास में बैठ गया ।

थोड़ी ही देर में ज़मींदार वहां आ पहुंचा और टोपी के पास बैठे लड़के से बोला, "क्या तुमने बग्घी में सूअर इस ओर से ले जाते किसी को देखा है?"

"हां, हुज़ूर देखा था, लेकिन काफी देर पहले । अब तक तो वह कहीं का कहीं निकल गया होगा ।" बुढ़िया के बेटे ने कहा ।

इस पर ज़मींदार ने उस युवक से सूअरी ले जाने वाले व्यक्ति को पकड़ने में मदद चाही । युवक ने कहा, "अगर आपको कोई नज़दीक का रास्ता पता है तो उसे पकड़ा जा सकता है । मैं वे रास्ते जानता तो हूं, लेकिन न मेरे पास घोड़ा है और न ही मैं इस समय किसी खास वजह से आपकी मदद ही कर सकता हूं । दरअसल, इस टोपी के नीचे एक बाज़ है जिसकी मैं रखवाली कर रहा हूं । अगर वह उड़ गया तो मेरा मालिक मुझसे उसकी कीमत वसूल कर लेगा । और यह कीमत तीन सौ रूबल है ।"

"बेटा, यह लो मेरा घोड़ा, और इस पर बैठकर उस बदमाश को जल्दी से जल्दी पकड़ लाओ । टोपी के नीचे बैठे बाज़ की मैं निगरानी कर लूंगा । तुम ये तीन सौ रूबल भी रख लो ताकि अगर बाज उड़ गया तो तुम्हें कोई हानि न उठानी पड़े ।" और इसके साथ ही ज़मींदार ने उस युवक को अपना घोड़ा और तीन सौ रूबल दे दिये ।

ज़मींदार का घोड़ा और तीन सौ रूबल जब उस युवक के हाथ में आ गये, तो उसने झाड़ी में छिपा रखी हुई बग्घी को भी अपने साथ ले लिया और अपने गांव जा पहुंचा ।

उधर ज़मींदार बहुत देर तक खड़ा उस युवक का इंतज़ार करता रहा । जब वह नहीं लौटा तो उसने मजबूर होकर टोपी को उठाया और यह देखकर हैरान रह गया कि टोपी के नीचे न कोई बाज़ था और न ही कुछ और ।

अब उसकी समझ में आ गया था कि वह युवक न केवल उसकी पत्नी को ही ठगाने में सफल रहा, बल्कि उसे भी ठगने में सफल हो गया ।

हनुमान तीर की गति से मैरावण के महल के उस कक्ष में जा पहुंचा जहां चंद्रसेना को रखा गया था। वह कक्ष बड़ी कारीगरी से तैयार किया गया था, और उसमें कई तरह के पत्थर जड़े, और कुछ पत्थर तो अंधेरे में भी चमक रहे थे।

उस कक्ष के द्वार पर कोई राक्षस पहरे पर दिखाई नहीं दिया। शायद सब काली के मंदिर में पहुंचे हुए थे और वहां हो रहे उत्सव में भाग ले रहे थे। लेकिन फिर उसे वहां एक भयानक सर्प-राक्षस दिखाई दिया।

जैसे ही हनुमान की उस पर नज़र पड़ी, वैसे ही हनुमान को भी उसने देखा और तुरंत फुफकारते हुए अपनी पूंछ पर खड़ा हो गया। उस सर्प राक्षस के पांव भी थे और उसके नथुनों से धुआं और आग की लपटें निकल रही थीं। वह अपना मुंह खोलकर हनुमान को निगलने के लिए आगे बढ़ा। हनुमान उसे खत्म करने के लिए उस पर झपटने ही वाला था कि उस कक्ष के ऊपरी हिस्से से एक स्त्री का आर्तनाद सुनाई दिया।

उसी क्षण हनुमान सुक्ष्म रूप में आ गया और उस सर्प राक्षस के मुंह से होता हुआ उसके पेट में जा पहुंचा। फिर उसके पेट में पहुंचते ही उसने अपने को बढ़ाना शुरू किया और इतना बढ़ा लिया कि उस सर्प-राक्षस का पेट ही फट गया, और इसके साथ ही उसका अंत हो गया।

सर्प-राक्षस का अंत होते ही हनुमान चंद्रसेना के कक्ष में दाखिल हो गया। समूचा

बोलो, वरना मैं अभी तुम्हारा सर कुल्हाड़े से काटकर उसे धड़ से अलग कर दूंगी। बोलो, जल्दी बोलो।" और इसके साथ ही उसने चंद्रसेना का गला पकड़कर उसे ज़ोर से दबाने की कोशिश की।

हनुमान ने तुरंत अपनी पूंछ बढ़ाकर उसे झरोखे में से कमरे के भीतर सरकाया और चंद्रसेना का गला दबा रही कंटकी को उससे जकड़ लिया। फिर उस पूछं को उसने कंटकी के गले से लिपटा दिया औ उसे ऊपर की ओर खींचने लगा। होतें-होते उस पूंछ की जकड़न कंटकी के गले पर इतनी मज़बूत हो गयी कि उसका दम ही घुट गया और उसका शरीर ढीला गया।

कंटकी अब अपने भारी-भरकम शरीर के साथ भूमि पर लुढ़की पड़ी थी। हनुमान ने उस कमरे के दरवाजे पर ज़ोर की लात मारी जिससे दरवाज़ा टूट गया और हनुमान वहां भीतर पहुंच गया। फिर उसने चंद्रसेना के सामने झुककर उसे नमस्कार किया और कुछ ही शब्दों में सारी स्थिति बयान कर दी। साथ ही उसने उससे निवेदन किया कि वह मैरावण को मारने का उपाय बताये, क्योंकि यह उपाय केवल वह जानती है।

हनुमान के मुंह से वस्तु-स्थिति जानकर चंद्रसेना अपना सारा दुःख-दर्द भूल गयी। राम का नाम सुनकर वह आनंद से विभोर हो गयी और बोली, "हे हनुमान। मैं तुम्हें मैरावण के प्राणों का रहस्य बताये देती हूं। लेकिन पहले तुम मुझे वचन दो कि मैरावण

कक्ष अंधेरे में डूबा हुआ था। केवल जहां-तहां मणियों की कांति का आभास हो रहा था। वह आर्त्तनाद अब भी सुनाई दे रहा था। वह उसी दिशा में बढ़ा। तभी उसे लगा कि किसी स्त्री को कोड़ों से पीटा ज़ा रहा है, और उसका आर्त्तनाद बढ़ता जा रहा है।

हनुमान बड़ी तेज़ी से उधर ही दौड़ा और जहां चंद्रसेना बंदी बनाकर रखी गयी थी, वह वहीं जा पहुंचा। वह कमरा भीतर से बंद था। इसलिए हनुमान ने एक ऊंचे झरोखे से झांककर भीतर देखा।

कमरे में कंटकी राक्षसी चंद्रसेना को कोड़ों से पीट रही थी, और कह रही थी, "बोलो, तुमने किसे काली के मंदिर में भेजा था?

के संहार के बाद तुम राम को एक बार मेरे पास ज़रूर लाओगे ।"

हनुमान ने उसे आश्वस्त किया और वचन दिया कि वह ऐसा ही करेगा । तब चंद्रसेना ने उसे वह स्थल बताया जहां मैरावण के प्राण सुरक्षित रखे थे । इसपर हनुमान फौरन वहां से बाहर निकला और आकाश में उड़ता हुआ सात समुद्रों के बीच स्थित ज्वालामुखी पद्म पर जा पहुंचा । पद्म के पंखुड़ियां धू-धू करके जल रही ज्वाला के लपटें थीं । हनुमान ने अग्निदेव का स्मरण किया और उस पद्म की नाल से होता हुआ सीधा मकर बिल में जा पहुंचा ।

मकर बिल में कई भयानक सर्प उसे फुफकारते हुए दीख पड़े । हनुमान ने भी उसी प्रकार फुफकारा और उन दुष्ट शक्तियों को अपने हाथों से इधर-उधर धकेल दिया । अब वे सर्प तो वहां से भाग गये, लेकिन वहां उसे एक भयानक राक्षय-आकृति दिखाई दी । उस आकृति की सफेद दाढ़ें थीं, और उसकी आंखें लाल-लाल थीं । वह विकट हंसी हंस रही थी और उसका रास्ता रोके हुए थी ।

"हटो मेरे सामने से । कौन हो तुम?" हनुमान ने गरजते हुए कहा ।

इस पर वह विकट आकृति हंस पड़ी और बोली, "मैं बैताल हूं । भूत, प्रेत और पिशाचों का नायक हूं । लेकिन तुम कौन हो? यहां केवल दो ही प्राणी आ सकते हैं । यह तो मैरावण और या एक महा-शक्तिमान । लेकिन तुम मैरावण तो हो नहीं, इसलिए तुम वही महाशक्तिमान होगे ।"

इस पर हनुमान और ज़ोर से गर्जन करता हुआ हंसा और बोला, "वाह रे, बैताल । श्मशान में रहते-रहते तुम्हें इस अंधकारपूर्ण गुफा में रहने की क्या सूझी । चलो, हटो मेरे रास्ते से, वरना अभी तुम्हें अपनी शक्ति का स्वाद चखाये देता हूं ।"

"अच्छा, चखाओ न स्वाद । मैं भी देखूं कितनी शक्ति है तुममें ।" बैताल उसी प्रकार अपनी विकट हंसी हंसे जा रहा था ।

हनुमान ने फौरन उस पर अपनी मूट्ठी से प्रहार किया । वह प्रहार इतने ज़ोर से हुआ कि बैताल वहीं ज़मीन पर लुढ़क गया । फिर वह संभला और हनुमान का अभिवादन

करते हुए बोला, "स्वामी, मैं धन्य हो गया । मैं शापग्रस्त था और इस गुफा में बंदी था । मुझसे एक छोटा-सा अपराध हो गया था । शिवजी ने कहा था कि तुम्हारे स्पर्श से ही मुझे उस शाप से मुक्ति मिलेगी । तुम्हारी जय हो ।" और इतना कहकर बैताल वहां से अदृश्य हो गया ।

हनुमान अब उस गुफा के भीतर गया । वहां एक ऊंची शिलावेदी पर एक गोल रत्नपेटिका रखी थी । पेटिका के ढक्कन पर भी आग की लपटें थीं । हनुमान जैसे ही उसके निकट हुआ, वहां से अनेक लपटें एक साथ उठीं और उन्होंने हनुमान को घेर लिया । हनुमान ने ज़ोर से सांस ली और फिर उतने ही ज़ोर से उसे बाहर की ओर छोड़ा । वे लपटें तब भी न बुझीं, बल्कि हनुमान को बराबर घेरे रहीं ।

हनुमान अब उस गुफा के भीतर गया । वहां एक ऊंची शिलावेदी पर एक गोल रत्न पेटिका रखी थी । पेटिका के ढक्कन पर भी आग की लपटें थीं । हनुमान जैसे ही उसके निकट हुआ, वहां से अनेक लपटें एकसाथ उठीं और उन्होंने हनुमान को घेर लिया । हनुमान ने ज़ोर से सांस ली और फिर उतने ही जोर से उसे बाहर की ओर छोड़ा । वे लपटें तब भी न बुझीं, बल्कि हनुमान को बराबर घेरे रहीं ।

हनुमान ने अब अपने दोनों हाथ ऊपर उठाकर अग्निदेव का ध्यान किया और उसके मुंह से ये शब्द निकले, "हे अग्निदेव । मैं तुम्हारे मित्र वायुदेव का पुत्र हूं । मुझ पर कृपा करो ।"

हनुमान का यह कहना था कि आग की वे लपटें फौरन बुझ गयीं । उसके तुरंत बाद उस पेटिका की ज्योति से ये शब्द सुन पड़े: "हे मारुति । तुम्हें कुछ विशेष बताने के लिए ही मैंने यह उग्र रूप धारण किया था । इस पेटिका में पांच भौंरे हैं । उन पांच भौंरों को तुम्हें एकसाथ मारना होगा और उन्हें एकसाथ मारने के लिए तुम्हें पांच मुखों की ज़रूरत पड़ेगी । तुम अपने उन मुखों में इन भौंरों को सांस के साथ भीतर खींच लोगे और फिर उन्हें चीथ कर खत्म कर दोगे ।"

हनुमान ने अग्निदेव को एक बार फिर नमस्कार किया और भौरों वाली उस
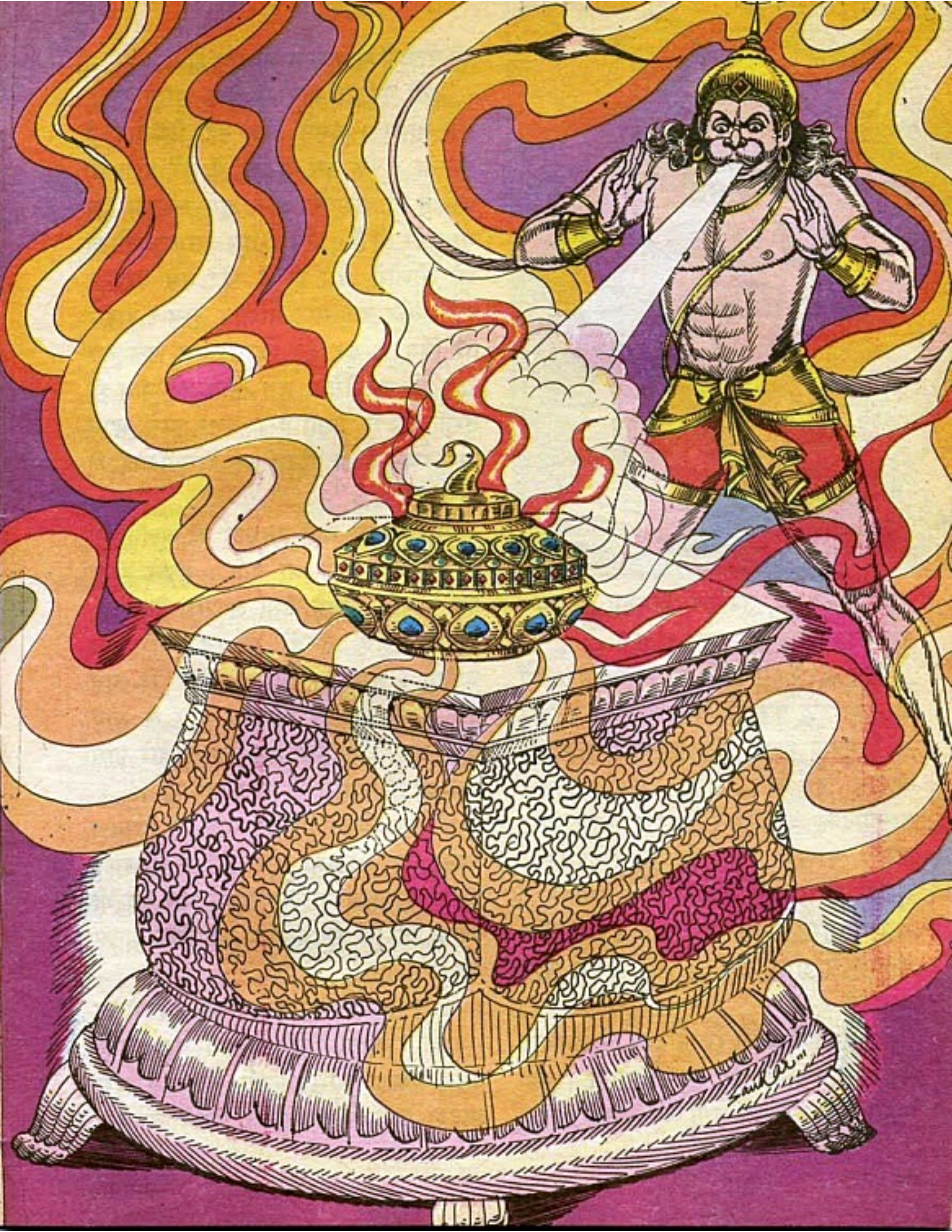
रत्नपेटिका को उठाकर वायुवेग के साथ राम-लक्ष्मण के पास जा पहुंचा ।

राम और लक्ष्मण अब भी असंख्य मैरावणों के साथ युद्ध कर रहे थे । हनुमान ने ज़ोर से सिंहनाद किया और मुख्य मैरावण के सामने जा खड़ा हुआ । फिर उसने रत्नपेटिका को उसके सामने किया और उससे बोला, "अरे पाताललंकेश्वर । तुम्हारे प्राणों वाली पेटिका मैं ले आया हूं । अब भी तुम्हें अवसर दे रहा हूं । राम और लक्ष्मण से क्षमा मांग लो और अपनी जान बचा लो ।"

अपने प्राणों वाली रत्नपेटिका को देखकर मैरावण के चेहरे का रंग उड़ गया । वह इतना पीड़ित दिखने लगा जैसे उसके शरीर को पत्थरों से कुचला जा रहा हो ।

उसी पीड़ित भाव के साथ उसने कहा, "हे वानर । तुमने ठीक नहीं किया । मैं मानता हूं कि इस पेटिका में मेरे प्राण हैं, लेकिन वे तुम्हारे और राम-लक्ष्मण का मृत्युद्वार भी हैं । जैसे ही तुम उस रत्नपेटिका को खोलोगे, वैसे ही वे भौंरें तुम पर टूट पड़ेंगे और डंक मार-मारकर तुम्हारे शरीर को विष से भर देंगे जिससे तुम जल कर राख हो जाओगे । तुम तीनों की मौत ही तुम्हें यहां ले आयी है । अगर तुम्हें अपने प्राण प्यारे हैं तो फौरन उस रत्नपेटिका को नीचे रख दो ।"

मैरावण की बातें हनुमान को मूर्खतापूर्ण लगीं । उसे हंसी आ गयी । हंसते हंसते वह बोला, "तुमने जैसा अपराध किया है, उसके लिए तुम्हें मृत्युदंड मिलना चाहिए । तुम राम और लक्ष्मण को सोते हुए अपने जादू से बांधकर यहां ले आये थे । अब कोई और मंत्र-तंत्र तुम्हारे पास बचा हो तो उसकी भी परीक्षा ले लो ।"

हनुमान की इस निर्भीक उक्ति से मैरावण घबरा गया । उसने ज़ोर-ज़ोर से चीखकर कंटकी को पुकारना शुरू किया और यह भी कहता रहा कि वह चंद्रसेना को फौरन खतम कर दे ।

उधर हनुमान कटाक्ष पर कटाक्ष किये जा रहा था । बोला, "अरे मायावी, वह कंटकी तुमसे ज्यादा बुद्धि रखती थी । तुम्हारा आदेश पाने से पहले ही उसने चंद्रसेना

को मारने की कोशिश की, लेकिन इसके लिए उस बेचारी को अपनी जान से हाथ धोने पड़े ।"

मैरावण की समझ में तुरंत आ गया कि अब तक क्या-क्या हो चुका होगा । वह बुरी तरह से चीखने लगा और उसके हाथ जो कुछ भी लगा, उससे वह राम-लक्ष्मण पर प्रहार करने लगा । वह अब अपने शरीर को स्वयं ही घायल करने लगा था ताकि उसके खून की बूंदें नीचे गिरती रहें और सैकड़ों मैरावण पैदा होते रहें ।

यह सब देखकर हनुमान ने भगवान् शिव का स्मरण किया और उससे पांच मुखों का वरदान मांगा । इस प्रकार वह पांच मुखों वाला हो गया ।

हनुमान के उन पांच मुखों ने प्रलयंकारी हुंकार की और इसके साथ ही उसने रत्नपेटिका का ढक्कन भी खोल दिया । ढक्कन खुलते ही एक भयानक गुंजार हुआ । उसी गुंजार के साथ वे पांचों भौंरें पेटिका से बाहर आये और हनुमान को डंक मारने को हुए ।

हनुमान के एक-एक मुख ने एक-एक भौंरे को अपने भीतर खींच लिया, और फिर उन्हें एकसाथ चीथते हुए उनका अंत कर दिया । अब उन भौंरों के केवल अवशेष ही बचे थे जिन्हें उसने थूककर बाहर फेंक दिया । भौंरों का खत्म होना था कि तमाम मायावी मैरवण धरती पर गिर पड़े और उनका अंत हो गया ।

मायावी मैरवाणों के अंत के साथ ही मैरावण की सेना का भी एक प्रकार से अंत हो गया, लेकिन फिर भी किसी सैनिक ने भागने की कोशिश नहीं की, बल्कि भयानकतम रूप से राम और लक्ष्मण पर प्रहार करते रहे । तब राम लाचार हो गये और उन्होंने एक ऐसा अस्त्र छोड़ा जिससे मैरावण का सर कट गया । सर कटते ही मैरावण नीचे गिरा और खत्म हो गया ।

मैरवण के खत्म होते ही पांच मुखों वाले हनुमान, राम और लक्ष्मण पर फूलों की वर्षा हुई । इतना ही नहीं, ब्रह्मा और शिव वहां स्वयं उपस्थित थे ।

ब्रह्मा ने राम से कहा, "हे राम, यह मैरावण कालनेमि का अंश है । हनुमान के

हाथों अब इसका अंत हो चुका है । हनुमान शिव का अंश है । इसलिए मैरावण संहार के लिए वह उस रत्नपेटिका को सात-समुद्रों के बीच से लाने में सफल हुआ ।

शिवजी ने हनुमान को आशीर्वाद दिया और बोले, ''हे हनुमान । तुम्हारा सामर्थ्य और पराक्रम अभूतपूर्व है । असाध्य कार्य को तुमने साध्य कर दिखाया, वरना मैरावण का संहार संभव न होता । भविष्य में जो भी पंचमुखांजनेय का स्मरण करेगा, उसे भूत, प्रेत और पिशाच कुछ भी हानि नहीं पहुंचा सकेंगे ।''

हनुमान ने अब अपने उस पंचमुखस्वरूप को त्याग दिया और उसे त्यागने के बाद उसने ब्रह्मा और शिव का भक्ति से अभिवादन किया ।

ब्रह्मा और शिव ने आशीर्वाद दिया कि राम और लक्ष्मण को विजय मिले, और आशीर्वाद देने के बाद वे वहां से चले गये । हां, जाने से पहले ब्रह्मा ने राम से कहा कि वह पाताल-लंका राज्य मत्स्यवल्लभ को सौंप दे । राम ने ब्रह्मा के आदेशानुसार मत्स्वल्लभ को बुलाया और पाताल लंका के सिंहासन पर उसे आरूढ़ कर दिया ।

हनुमान को अपना वह वचन याद था जो उसने चंद्रसेना को दिया था । उसने राम से सविनय निवेदन किया कि वह उसे चंद्रसेना को दिया वचन पूरा करने में सहायता करें । वह बोला, ''हे राम, अगर चंद्रसेना ने हमारी मदद न की होती तो मुझे कभी यह पता न चल पाता कि मैरावण के प्राण कहां छिपे हैं । इसके लिए मुझे चंद्रसेना को वचन देना पड़ा कि मैरावण के संहार के बाद मैं आपको चंद्रसेना के पास एक बार ज़रूर ले जाऊंगा ।''

राम एक क्षण मौन रहे और फिर उन्होंने सहमति में अपना सर हिलाकर कहा, ''ठीक है, मैं तैयार हूं ।''

जैसे ही राम के मुंह से ये शब्द निकले, हनुमान ने संतोष की सांस ली । अब हनुमान आगे-आगे चल रहा और राम मंदहास करते हुए उसके पीछे-पीछे चल रहे थे और वे चंद्रसेना के कक्ष को बढ़ रहे थे ।
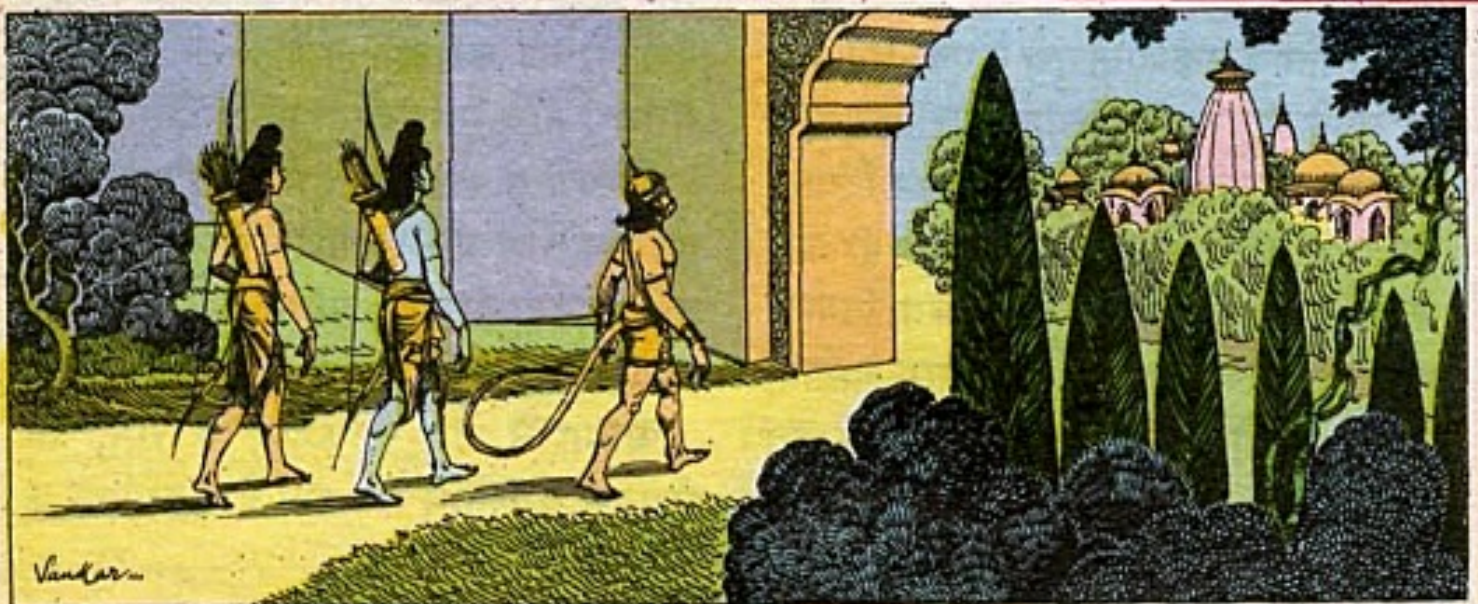
सहज स्वभाव

गोवर्धनपुर में गोपाल नाम का एक व्यक्ति रहता था । वह बहुत ही नेक था । बचपन से ही उसके भीतर सेवाभाव था । उसकी हमेशा यही कोशिश रहती थी कि उसके आस-पास के सब लोग खुश रहें । वह कुछ लोगों का उत्साह बढ़ाकर उनकी मदद करता, कुछ को अपनी सेवाएं भी अर्पित करता, और अगर आवश्यक होता तो कुछ की धन से भी मदद करता ।

इसी तरह कुछ समय बीत गया । अब गोवर्धनपुर में मुश्किल से ही कोई व्यक्ति ऐसा होगा जो गोपाल की उसके गुणों के कारण सराहना करता हो । वह स्वयं ही लोगों से पूछ-पूछ कर उनकी आवश्यकताओं का पता लगाता और उनकी मदद करता । कुछ तो ऐसे भी थे जो उससे यह कहते हुए भी न सकुचाते, "तुम्हारे भरोसे ही तो हमने और किसी से मदद नहीं मांगी । अगर तुमने भी अब 'न' कर दी तो हम कहां जायेंगे?"

कुछ लोग गोपाल की उसकी पीठ पीछे बुराई भी करते । एक बार तो उसने किसी के मुंह से अपने बारे में कुछ अनाप-शनाप भी सुना । वह कह रहा था, "इस गोपाल के पास काफी पैसा है । अपने ऊपर तो वह कुछ खर्च करता नहीं । बस, अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए कभी-कभार किसी को छोटी-मोटी रकम दे देता है ।इतना धन है उसके पास!अगर दिल खोलकर दे तो वह ग़रीब नहीं हो जायेगा ।"

ऐसी अनाप-शनाप बातें सुनकर गोपाल बड़ा दुखी हुआ । उसने यह सब अपनी पत्नी को बताया और उससे बोला, "देख लो, मेरी नेकी का मुझे क्या बदला मिल रहा है । जिसकी मैं मदद करता हूं, उसे उससे संतोष नहीं । और जिसकी मैं मदद नहीं

कर पाता, वह मुझ पर गुस्सा दिखाता है । मैं तो अब इसी नतीजे पर पहुंचा हूं कि भविष्य में किसी भी दीन-दु:खी की मदद नहीं करूंगा ।"

गोपाल की बात सुनकर उसकी पत्नी हंसे बिना न रह सकी, और कहने लगी, "बिच्छू को अगर कोई किसी विपत्ति से बचाता है तो भी बिच्छु उसे डंक मारने से बाज़ नहीं आता । इसी प्रकार पेड़ को यदि पत्थर भी मारो तो भी वह फल देता ही है । यह सब उनका सहज स्वभाव है । आपका भी यह सहज स्वभाव बन गया है कि आप किसी को विपदा में नहीं देख सकते । दरअसल, आपको अब मन की शांति चाहिए । इसलिए आपके लिए बेहतर यही होगा कि आप कुछ दिन तीर्थ-यात्रा कर आयें ।"

लेकिन गोपाल का स्वर उदास था । बोला, "मेरा तो केवल नेकी पर ही विश्वास था । इसमें भगवान को मैं कभी नहीं लाया । तीर्थयात्रा करने से कोई लाभ नहीं होगा ।"

"आप भगवान् को बीच में नहीं लाये, यही आपकी सबसे बड़ी भूल थी, वरना कितनी शांति मिलेगी आपके मन को ।" गोपाल की पत्नी के स्वर में असीम स्नेह था ।

लेकिन गोपाल इससे सहमत नहीं था । कहने लगा, "मेरी राय में एक जीता-जागता मानव मंदिर की शिला-मूर्तियों की अपेक्षा कहीं महान है ।"

इस पर गोपाल की पत्नी बोली, "तब तो आपके लिए चलते-फिरते मानव-रूपी भगवान पर विश्वास करना ही ठीक होगा । मैंने सुना है कि श्रीनिवासपुर में आत्मानंद महात्मा है जिसे भगवान् का अवतार समझा जा रहा है । आपका चचेरा भाई श्रीपाल उन स्वामी जी का अनन्य भक्त बन गया है । वह भी आपकी तरह एक समय नास्तिक था ।"

पत्नी की बात सुनकर गोपाल के मन में एक विचार आया—यदि स्वामी आत्मानंद श्रीपाल जैसे नास्तिक में भक्ति-भाव जगा सके तो सचमुच वह अवतार पुरुष होंगे । दरअसल, श्रीपाल नास्तिक ही नहीं था, अव्वल दर्जे का खुदगर्ज भी था, और धोखाधड़ी में भी उसका कोई सानी

नहीं था । अब अगर वह सचमुच भक्त बन गया है तो स्वामी जी में कोई-न-कोई बात होगी ।

यह सब सोचते हुए गोपाल ने अपनी पत्नी से कहा, ''चलो, हम प्रमोदपुर चलते हैं । वहां श्रीपाल के घर में कुछ दिन रहेंगे ।''

जब वे प्रमोदपुर में श्रीपाल के यहां पहुंचे तो उन्होंने देखा कि श्रीपाल के घर पर बड़ी सजधज के साथ पूजा हो रही है ।

जब एकांत मिला तो श्रीपाल ने गोपाल को बड़े स्नेह से अपने गले लगाया और बोला, ''इस समूचे इलाके में एक तुम्ही ऐसे व्यक्ति हो जो मुझे बहुत प्यारे लगते हो । इस गांव में हर केई मुझे फटकारता था और कहता था कि मैं कभी भी जीवन में उन्नति नहीं कर पाऊंगा । यह सब स्वामी आत्मानंद की ही कृपा है कि अब मैं इतने वैभव के साथ जी रहा हूं ।''

श्रीपाल की बात सुनकर गोपाल बोला, ''गांव में जिसने भी तुम्हें डांटा होगा, स्नेहवश ही डांटा होगा । उनके मन में केवल एक ही डर होगा कि तुम कहीं बुरे लोगों की संगत में न पड़ जाओ और फिर बाद में पछताओ ।''

श्रीपाल को गोपाल का यह कथन अच्छा नहीं लगा । बोला, ''सच पूछो तो मेरे बराबर कोई नहीं । हमारे गांव के वीरबाहू के बेटे को राजदरबार में नौकरी मिलनी थी । नौकरी मिलने से पहले उसके बारे में जांच-पड़ताल भी की जाती थी । मैं इस

गांव का पटेल हूं । मझ से जब पूछा गया तो मैं यह नहीं भूला था कि वीरबाहू ने एक बार मेरा विरोध किया था । वह बात अब भी मेरे मन में कांटे की तरह चुभ रही थी । जांच-पड़ताल करने वालों को मैंने फौरन कहा कि ऐसे लड़के को एकदम नौकरी नहीं मिलनी चाहिए ।'' और यह सब कहकर श्रीपाल विकट रूप से हंसने लगा ।

श्रीपाल की इस स्वीकारोक्ति पर गोपाल चौंका और बोला, ''अब तो तुम भगवान् के भक्त हो चुके हो न । मैंने सोचा था कि अब तुम राग-द्वेष से ऊपर उठ चुके होगे । इस तरह पुराने द्वेष मन में पालते रहकर प्रतिकार लेना अच्छा नहीं होता ।''

पर श्रीपाल ने गोपाल की बात पर ध्यान

डाल दिया । स्वामी आत्मानंद जी की कृपा से इस घटना के एक दिन बाद ही, यानी कल ही, मेरी बेटी के लिए एक अच्छा रिश्ता आ गया और वह पक्का भी हो गया ।''

श्रीपाल की बातें सुनकर गोपाल चकित यह गया, लेकिन वह पूछे बिना रह न सका, ''श्रीपाल, इस तरह द्वेष में आकर, एक मासूम लड़की का रिश्ता बिगाडकर उसे हानि पहुंचाना क्या तुम्हें शोभा देता है?''

''यह सब स्वामीजी की लीला है । शंकर की बेटी का रिश्ता अगर कहीं लिखा होता तब मेरी बेटी के लिए भी रिश्ता पक्का हो जाना चाहिए था । इसे मैं शंकर का दुर्भाग्य ही कहूंगा ।'' श्रीपाल ने कहा ।

श्रीपाल की डींगें अब गोपाल की सहनशीलता के परे हो गयी थीं । उसने कहा, ''यह कैसा स्वामी है जो तुम्हारा भला करने के लिए दूसरों की हानि करवाता है? इसे तुम भगवान् का अवतार कहोगे? और फिर शंकर ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था?''

''मुझे इस सब से कोई सरोकार नहीं । मैं तो केवल यही चाहता हूं कि मेरा परिवार सुख-शांति से रहे । जब तक मेरा काम बनता रहेगा, स्वामी जी मेरे लिए भगवान हैं और मैं उनका भक्त हूं । अगर दूसरों की भलाई होगी, तब वह मेरे भगवान कैसे हुए ।'' श्रीपाल ने अपने मन की बात कही ।

श्रीपाल की बातें सुनकर गोपाल को ऐसे लगा जैसे कि वह कांटों की सेज पर बैठा हो । अब वह इस गांव से जल्दी से

नहीं दिया और कहता गया, ''हमारे गांव का शंकर कल-परसों ही यहां लौटा है । उसकी बेटी के लिए एक अच्छा रिश्ता आया था । वह हमारे गांव का है, इसलिए इनके बारे में लड़के वालों ने मुझसे ही पूछताछ की । कुछ दिन पहले ही किसी ने उसकी बेटी को मेरी बेटी की तुलना में सुंदर और सशील कहा, और यह भी कहा कि मेरी बेटी की शादी से पहले शंकर की बेटी की शादी होनी चाहिए । यह बात मेरे भीतर शूल की तरह चुभ गयी । मैंने अपनी बेटी के लिए जितने भी रिश्ते देखे, उनमें से एक भी तय न हो पाया । इसलिए कैसे मैं शंकर की बेटी की शादी हो जाने देता । मैंने किसी न किसी तरह बनते काम में बिगाड़

जल्दी चले जाना चाहता था । वह मुश्किल से ही वहां एक दिन रुका और दूसरे दिन अपनी पत्नी को साथ लेकर वहां से चला गया ।

जब तक गोपाल श्रीपाल के यहां रहा, तब तक श्रीपाल अपनी ही डींगें हांकता रहा और उसे बताता रहा कि अब उसे किस-किस से बदला लेना है ।

गोपाल की पत्नी को यह लगा कि शायद वे अपने गांव को लौट रहे हैं । लेकिन जब उसे यह पता चला कि वे स्वामी आत्मानंद के दर्शनार्थ श्रीनिवासपुर जा रहे हैं तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा ।

कुछ देर मौन रहने के बाद वह अपने पति से बोली, "आपके इस चचेर भाई में भगवान् में भक्ति तो जगी, लेकिन इसका स्वार्थ और अहंकार पहले से भी कहीं अधिक हो गये हैं । इसमें मानवता तो नाममात्र को भी नहीं रहा, बल्कि अपने अहंकारवश यह दूसरों से अकारण ईर्ष्या करने लगा है और उन्हें भरपूर हानि पहुंचा रहा है । यह सब देखकर मेरा भी भगवान् पर से विश्वास उठता जा रहा है । ऐसी स्थिति में आपके मन में स्वामी आत्मानंद से मिलने का विचार क्यों आया?"

अब सोचने की बारी गोपाल की थी । आखिर बोला, "ईश्वर-भक्ति को कभी भी आदमी के पद और प्रतिकार का माध्यम नहीं बनना चाहिए । ईश्वर भक्ति तो वह अलाव है जिसमें अहांकार, द्वेष और ईर्ष्या जैसे सब दुर्गुण जलकर मिट जाने चाहिए । लेकिन मेरे भाई श्रीपाल के मामले में ऐसा नहीं हुआ । लेकिन स्वामी आत्मानंद जी सचमुच अवतार पुरुष हैं क्योंकि वह स्वार्थ के अलावा और कुछ भी न जानने वाले श्रीपाल में ईश्वर-भक्ति जगाने में सफल हुए । अगर उन्हें श्रीपाल के सहज स्वभाव के बारे में पूरी तरह पता चल जाये तो वह उसमें ज़रूर भारी परिवर्तन ला सकेंगे । इसीलिए मैं अब उनके दर्शन करना चाहता हूं ।"

गोपाल की पत्नी की समझ में अब आ गया था कि उसके पति का सहज स्वभाव फिर काम कर रहा है,इसलिए वह चुपचाप उसके साथ चल दी ।

चंदामामा की खबरें

मेले में 'महल'

पिछले दिनों नयी दिल्ली में गुब्बारों का एक उत्सव मनाया गया । इसमें लगभग दस टीमें जर्मनी और इंग्लैंड से आयी थीं, और कुछ भारत से थीं । ये सब टीमें 'गरम हवा गुब्बारा प्रतियोगिता' में शामिल थीं । सुबह के समय धुंध थी जो रुकावट खड़ी कर रही थी । हवा भी इतनी गरम नहीं थी कि मेला उत्सवपूर्ण ढंग से शुरू किया जा सकता । लेकिन वहां जो लोग जुटे हुए थे, वे निराश नहीं थे । जल्दी ही वहां 'महल' नाम के गुब्बरे ने अपने पंख फैलाये और दर्शकों को खुश करता हुआ वह ऊपर हवा में जा पहुंचा । गरम हवा के गुब्बारे को उड़ाने वाला एक व्यक्ति अपने साथ विश्वविख्यात ताजमहल का नमूना लाया था । यह ताजमहल इतना ऊंचा उड़ा कि खतरे की हद से बाहर हो गया, और तब तक उड़ता रहा जब तक कि लोगों की खुशी की किलकारियां शांत नहीं हो गयीं । लेकिन अंत में बोलने वाले उप-राष्ट्रपति श्री के. आर. नारायणन ही थे जिन्होंने बताया कि भारत के एक वायसराय की यह गुप्त इच्छा थी कि वह आगरा के मूल मज़ार को, उसका एक-एक पत्थर करके, इंगलैंड ले जाये । यदि वह आज जिंदा होता तो वह इस 'महल' को उड़ाकर ले जाने की सोचता, चाहे उसे एक-एक गुब्बारा करके ही ले जाना पड़ता ।

पटाखों के लिए मशीन

क्या कोई ऐसा बच्चा होगा जो पटाखे न चलाना चाहता हो, विशेषकर दीवाली पर? हां, कुछ बच्चे ऐसे हैं जिन्हें इन्हें चलाने में संको होता है क्योंकि उन्हें इसके खतरे के बारे में पहले से ही आगाह कर दिया जाता है । लेकिन वह दिन दूर नहीं जब उनका यह डर जाता रहेगा, क्योंकि वे पटाखों को अपने से एक हाथ दूर रखकर, या कहो कि मशीन के बाजू की दूरी पर चला सकेंगे । इस मशीन को तमिलनाडु में ईरोडे की एक पाठशाला में काम करने वाले एक कला अध्यापक ने तैयार किया है । इसमें पटाखे को पकड़ने के लिए एक लंबी चिमटी रहती है और पटाखे को छोड़ने के लिए बिजली के हीटर का प्रयोग किया जाता है । जैसे ही चिमटी से बिजली गुजरती है, वैसे ही उसमें पैदा हुई गरमी से पटाखा छूट जाता है । यह पटाखा लगभग बीस फुट की दूरी पर जाकर फटता है । इसका आविष्कार करने वाले के. आनंदन् को अब एक ऐसे प्रायोजक की तलाश है जिसे बाद में यह शिकायत न हो कि पटाखे को छुए बिना ही उसका हाथ जल गया ।
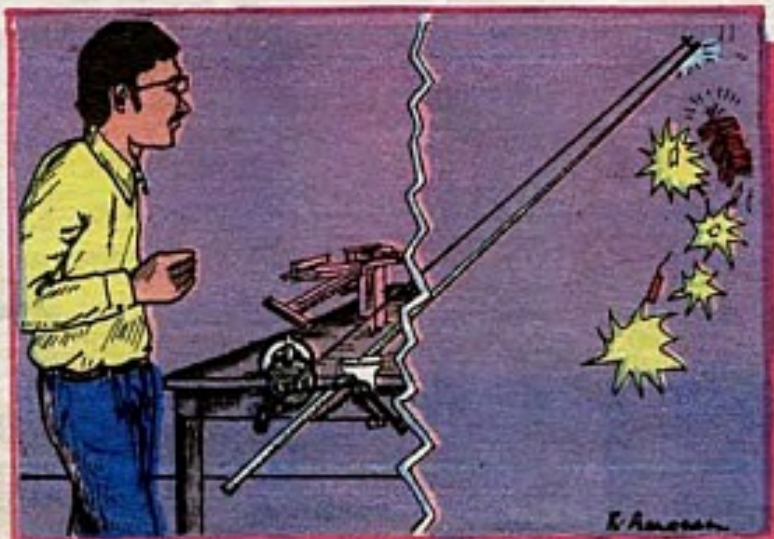
अनूठी भरतम्मा

एक जंगल में एक भरत पक्षी रहता था । शुरू से ही उसमें उपकार की भावना थी । भूलोक में जब उसकी आयु समाप्त हो गयी, तब उसके पुण्यों के फल स्वरूप एक विमान में देवदूत आये और उसे स्वर्गलोक ले गये ।

वहां सभी देवताओं ने उस पक्षी का बड़ा सत्कार किया और उससे कहा, "मांगो, तुम क्या वरदान मांगते हो ।" उस ने उत्तर दिया कि वह कुछ समय बाद अपनी मांग बतायेगा ।

अब स्वर्गलोक में रहते हुए भरत पक्षी को काफी समय हो गया था । एक दिन वह वहां के देवताओं के पास गया और उनसे बोला, "अब मैं फिर से भूलोक में जाना चाहता हूं । वहीं मुझे अच्छा लगेगा ।"

तब स्वर्गलोका के देवाताओं ने उसे वरदान दिया कि वह जैसा भी चाहे, वैसा रूप धारण कर सकता है और जिस किसी लोक में चाहे, जाकर रह सकता है ।

तब भरत पक्षी अपने छोटे-छोटे पर फैलाकर भूलोक में आ उतरा, और वहां उसने नारी रूप धारण कर लिया । अब वह भरतम्मा बन गया था, और जंगल में अपनी पहले वाली जगह पर एक मकान बनाकर रहने लगा था ।

एक दिन भरतम्मा को अपने बचपन की एक बात याद आयी । तब वह शहर में अपने दादा के यहां गयी थी । शहर में अनेक प्रकार की सुविधाएं थीं, अनेक प्रकार के आमोद-प्रमोद के साधन थे ।

भरतम्मा का मन शहर की ओर आकृष्ट हुआ । अगर वह शहर में अपने दादा के यहां पहुंच जाये तो सब सुख-सुविधाएं उसे प्राप्त हो जायेंगी और जंगल में लौटना भी उसके लिए ज़रूरी नहीं होगा ।

२५ वर्ष पूर्व चंदामामा में प्रकाशित कहानी

इस तरह निश्चय करके भरतम्मा ने सुबह-सुबह खाना खा लिया और बढ़िया कपड़े और ज़ेवर पहनकर वह खूब सज-धज गयी। फिर उसने अपने घर पर ताला लगाया और चाभी खिड़की की सलाखों में छिपाकर शहर जाने निकली।

इतने में उसे पीछे से "भरतम्मा!" "भरतम्मा!" की आवाज़ सुनाई पड़ी। भरतम्मा ने पीछे मुड़कर देखा। वहां एक हिरण का छौना खड़ा था। वह डर से कांप रहा था।

इस पर भरतम्मा ने पूछा, "क्यों रे, क्या बात है? ऐसे क्यों डर रहा है?"

"भरतम्मा, हमारे जंगल में शिकारी आये हुए हैं। वे धनुर्बाणों से लैस हैं और जो भी पशु उन्हें दिखई देता है, उसे मारने के लिए वे उसका पीछा करते हैं। क्या मुझे तुम्हारे घर में अपना सर छिपाने की जगह मिल सकती है?" हिरण के छौने ने कहा।

"अरे, इसमें पूछने की क्या बात है? चले आओ सीधे यहां।" कहकर भरतम्मा अपने घर लौट आयी और खिड़की में छिपाकर रखी गयी चाभी को उसने उठाया और हिरण के छौने के लिए दरवाजा खोल दिया।

हिरण का छौना भरतम्मा के घर के भीतर हुआ। भरतम्मा ने कहा, "देखो मेरे प्यारे बच्चे, घर के पिछवाड़े में हर तरह की साग-सब्जी और फल हैं। जब तक तुम्हारी इच्छा है, यहां रहो।" फिर उसने घर का दरवाजा बंद किया और चाभी को खिड़की की सलाखों में छिपाकर वहां से शहर को चलने निकली।

उसने अभी दो पग ही भरे थे कि फिर उसे पीछे से किसी की दर्द भरी आवाज़ सुनाई दी। एक बत्तख डरी-सहमी-सी उसकी ओर दौड़ी चली आ रही है।

"क्यों री बत्तख रानी, क्या बात है? इस तरह क्यों दौड़ी चली आ रही हो?" भरतम्मा ने जानना चाहा।

"भरतम्मा, मैं अपने बंधु-बांधवों के साथ यहां एक तालाब में स्नान करने आयी थी। मैं स्नान करते-करते अपने में इतनी खो गयी कि मैं वक्त पर तालाब से बाहर न आ सकी। वे मुझे पुकारते रहे और गुस्से में मुझे यहीं छोड़ गये। मैं अपनी राह से भटक गयी

हूं ।" यह कहते हुए बत्तख आंसू बहाये जा रही थी ।

भरतम्मा ने उसे पुचकारा और उसे ढाढ़स बंधाते हुए बोली, "अरे मेरी बिटिया, चिंता क्यों करती है? मेरे घर के पिछवाड़े में एक पोखर है । तुम उसमें जी बर के नहाओ । हिरण का एक छौना भी वहीं है । उसका तुम्हें साथ मिलेगा । मैं शहर से लौटते ही तुम्हें तुम्हारे बंधु-बांधवों के यहां पहुंचा आऊंगी ।" और यह कहते हुए भरतम्मा ने दरवाजा खोलकर बत्तख को भीतर कर दिया ।

बत्तख जब भीतर चली गयी तो उसने पहले की तरह ही फिर दरवाजे पर ताला लगा दिया और चाभी को पहले की तरह ही छिपाकर शहर में अपने दादा के घर के लिए निकल पड़ी ।

अब तक काफी देर हो चुकी थी । इसलिए भरतम्मा बड़े तेज़ कदमों से चल रही थी । तभी पीछे से फिर किसी दुखिया की आवाज़ सुन पड़ी । फौरन भरतम्मा ने पीछे मुड़कर देखा । वहां एक गिलहरी थी ।

भरतम्मा ने उससे पूछा, "क्यों गिलहरी बहन, इस तरह परेशान क्यों हो?"

गिलहरी का उत्तर इस प्रकार था, "बारिश के दिनों के लिए बड़ी मुश्किल से कुछ दाने बटोरे थे मैंने, और उन्हें वहां एक पेड़ के कोटर में छिपा कर रखा था । लेकिन किसी चोर-उचक्के ने उन्हें चुरा लिया है । अब मेरे यहां खाने को एक दाना तक नहीं है । मेरी सारी मेहनत बेकार चली गयी । बताओ, मैं क्या करूं ।" गिलहरी ज़ोर-ज़ोर

से रो रही थी ।

भरतम्मा ने गिलहरी को सांत्वना दी और कहा, "अरी पगली, इतनी छोटी सी बात पर इस तरह परेशान हो गयी? मेरा घर धन-धान्य से भरा-पड़ा है । तुम जितना अनाज चाहो, खाती रहो । उसमें कहीं कोई कमी नहीं आयेगी । तुम जब तक चाहो, यहां रह सकती हो । तुम्हारा साथ देने को एक हिरण का छौना और एक बत्तख है । तुम्हारा जी भी लगा रहेगा ।" और यह कहते हुए उसने फिर सलाखों के पीछे से चाभी निकाली, घर के दरवाजे का ताला खोला और गिलहरी को अनाज वाले कमरे में छोड़ दिया ।

गिलहरी जब उस कमरे में दाने खाने लगी तो भरतम्मा घर से फिर बाहर आ गयी, घर का दरवाज़ा बंद किया, उस पर फिर ताला लगाया, ताले की चाभी को खिड़की की सलाखों में छिपाया और शहर जाने के लिए मन ही मन तैयार होने लगी ।

अभी वह खड़ी सोच ही रही थी कि उसके मन में एक और विचार आया । उसने छिपायी हुई चाभी को सलाखों के पीछे से निकाला, दरवाजे का ताला खोला, दरवाजे को धकेला और घर के भीतर हो ली । अब उसने अपने बढ़िया कपड़े और गहने भी उतार दिये और उनकी जगह साधारण कपड़े पहनकर आराम कुर्सी पर बैठ गयी और कुछ सोचने लगी

"इस जंगल में मेरे ये सब साथी तरह-तरह की तकलीफों का सामना कर रहे हैं । ऐसी हालत में अगर मैं शहर चली जाती हूं तो इनकी देख-देख कौन करेगा? और अगर ये दुखी ही रहें तो मेरा सुख किस काम का । मैं कभी शहर नहीं जाऊंगी, कभी नहीं जाऊंगी, बस यहीं रहूंगी ।"

इसके बाद भरतम्मा ने कभी शहर जाने की नहीं सोची । वह वहीं उस जंगल में रहती रही ।

प्रकृतिः रूप अनेक

पहले "सर"

सांप अपने शिकार को जिंदा ही पकड़ता है और फिर इसे भींचकर या अपना ज़हर उसमें उड़ेलकर इसे खत्म कर देता है। जब इसे यकीन हो जाये कि इसका शिकार मर गया है तो यह पहले उसे सर को अपने मुंह में लेता है, और फिर धीरे-धीरे उसे समूचे को निगल लेता है। अगर शिकार कोई बड़ा जानवर है तो यह किसी पेड़ या उसकी शाखा को लपेट कर उसकी हड्डियों का चूरा बना लेता है।

पत्तों की समानता

तुमने तितली को देखा है? इसके दोनों भागों में कितनी समानता रहती है। इसी प्रकार पत्तों में भी। अगर तुम किसी पत्ते को बीचों-बीच काट दो तो तुम्हें दो भाग एक समान मिलेंगे। दरअसल, पत्ते शक्ल में होते भी एक समान हैं। कहीं कहीं अंतर रहता है, जैसे कि उत्तरी अमरीका के सस्साफ़रा में। इसकी एक ही शाखा पर तीन विभिन्न आकार के पत्ते रहते हैं।
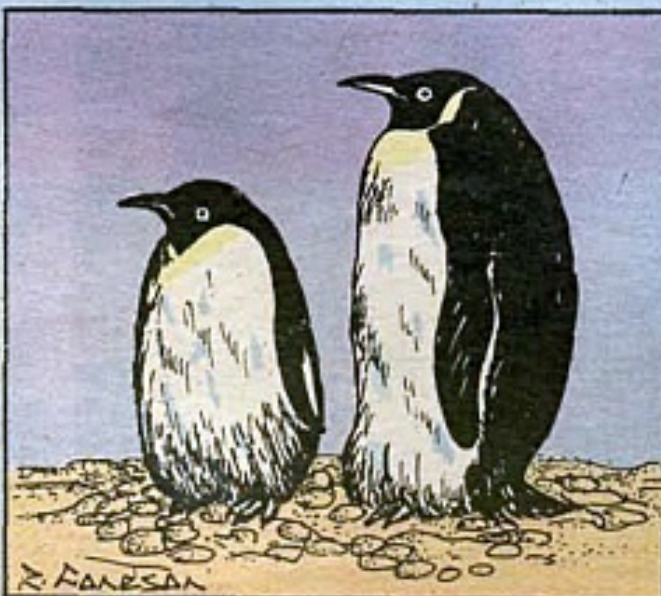
पनडुब्बी से भी तेज़

पैंग्विन केवल दक्षिणी ध्रुव के क्षेत्र में ही देखा जाता है। है तो यह पक्षी ही, लेकिन यह उड़ नहीं सकता। हां, पानी के भीतर यह पनडुब्बी से भी तेज़ चलता है। सम्राट् पैंग्विन ८७० फुट की गहराई तक जा सकता है, और पानी के भीतर बीस मिनट तक वह रह सकता है।

"अब मैं तुम्हें मामा बेयर और
पापा बेयर कि कहानी सुनाती हूँ" ।

आपका बच्चा और मामा बेयर
आप उनको कभी अलग नहीं कर सकते।

कून

अनेक प्रकार के मुलायम खिलौने चन्दमामा कलैक्शन में हर एक कि एक अनोखा पहचान ।

चन्दामामा कलैक्शन कि प्रत्येक खिलौना विशिष्ट प्रकार से बने हैं, ताकि वे आपके बच्चे को सालों – साल तक दोस्ती का एहसास दिलायेगें ।

- पूरी तरह सुरक्षित – सभी उम्र के बच्चों के लिए ।

- टिकाऊ – बेहतरीन क्वालिटि सिनथेटिक फायिबर से बनी ।
- धुलाई – आकार नही खोयेगा ।

बॉव–वाव

और अब एक आश्चर्य उपहार!
प्रत्येक चन्दामामा मुलायम खिलौना खरीदने के बाद आप अपने दुकानदार से

मुफ्त गिफ्ट कूपन

माँगे । कूपन भरने के बाद दिये हुए पते पर भेजें । हम डाक द्वारा आपको पुरस्कार भेजेंगें जो आपके बच्चों को घंटो तक खुश रखेंगे ।

वॉबिट

जम्बो

अभी खरीदें – उपहार सिर्फ थोड़ी दिनों कि लिए !
सभी मुख्य दुकानों में उपलब्ध ।
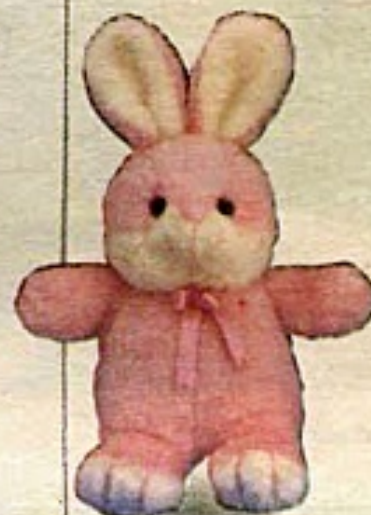
स्पोर्टी

CHANDAMAMA COLLECTION

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अप्रैल, १९९३ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

M. Natarajan

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां एक शब्द या छोटे वाक्य में हों । ★ १० फरवरी '९३ तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००-/ का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें : **चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.**

दिसम्बर १९९२ की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **मुखमण्डल पर संचित अनुभव!**

दूसरा फोटो : **नयनों में सपनों का वैभव!!**

प्रेषक : राजीव बैनर्जी, १२३/५, रेलवे लेन, राऊज़ एवेन्यू, नई दिल्ली—१

पुरस्कार की राशि रु. १००/- इस महीने के अंत में भेजी जाएगी ।

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.